ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 10 मई 2026

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 10 मई 2026 से 16 मई 2026

ज्येष्ठ कृ. 08 ● वि० सं०-2082 ● वर्ष 67, अंक 19, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 202 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रु. ● वार्षिक शु. 300/- रु.

डी.ए.वी. जगजीतपुर, हरिद्वार में विद्यारम्भ संस्कार

डी.ए.वी. सेंटेनरी पब्लिक स्कूल, जगजीतपुर, हरिद्वार में प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी नर्सरी कक्षा में प्रवेश लेने वाले नन्हे–मुन्ने बच्चों का विद्यारम्भ संस्कार आज दिनांक 30.4.2026 को विधिवत् संपन्न किया गया।

ईश्वर से बच्चों के उज्ज्वल एवं सुखद भविष्य की मंगलकामना की गई।

विद्यालय प्रधानाचार्य मनोज कुमार कपिल ने बच्चों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि विद्यालय में प्रवेश करते ही बच्चा एक विद्यार्थी के रूप में अपने जीवन की नई यात्रा प्रारम्भ करता है। उन्होंने अभिभावकों से भी अनुरोध किया कि वे विद्यालय में दी जा रही शिक्षा और संस्कारों का सम्मान करते हुए बच्चों को जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करें।

प्रधानाचार्य ने डीएवी के 140 वर्षों के गौरवपूर्ण इतिहास को अभिभावकों के साथा सांझा किया। उन्होंने अभिभावकों को बताया कि डीएवी संस्था के छात्रों ने शिक्षा के हर क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया है। प्रधानाचार्य मनोज कुमार कपिल ने यह भी कहा कि छोटे–छोटे बच्चे जब पहली बार अपने माता–पिता से दूर विद्यालय आते हैं, तो अध्यापिकाएँ उन्हें अत्यंत स्नेह, धैर्य और कुशलता से संभालती हैं। वे खेल–खेल में बच्चों को शिष्टाचार और शिक्षा का प्रारंभिक ज्ञान देती हैं।

प्री–प्राइमरी कक्षाओं की सुपरवाइजरी हेड श्रीमती कुसुम बाला त्यागी ने सभी अभिभावकों का आभार व्यक्त करते हुए बच्चों को स्नेह एवं आशीर्वाद प्रदान किया।

अंत में प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम का सफल समापन हुआ।

डी.ए.वी. पश्चिम एन्क्लेव ने मनाया 40वाँ स्थापना दिवस

डी.ए.वी. सेंटेनरी पब्लिक स्कूल, पश्चिम एन्क्लेव में 40वाँ स्थापना दिवस बड़े ही उत्साह और उल्लास के साथ मनाया गया।

कार्यक्रम की शुरुआत प्रातःकाल हवन के साथ हुई, जिसमें पूरे विद्यालय परिवार–शिक्षकगण एवं विद्यार्थियों ने श्रद्धापूर्वक सहभागिता की। हवन के माध्यम से वातावरण को पवित्र और सकारात्मक बनाया गया।

प्रधानाचार्या श्रीमती सोनिया मलिक ने अपने भाषण में विद्यालय की 40 वर्षों की यात्रा, उपलब्धियों, उद्देश्यों एवं विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य पर प्रकाश डाला।

हिंदी विभागाध्यक्षा ने स्थापना दिवस, वसंत पंचमी और अंबेडकर जयंती के त्रिवेणी संगम पर जीवन मूल्यों को बताते हुए अपने विचार व्यक्त किए और विद्यार्थियों को विद्यालय की परंपराओं एवं मूल्यों को अपनाने के लिए प्रेरित किया। छात्रों ने भी इस समारोह से शिक्षा लेते हुए अपने जीवन में सुधार करने का संकल्प लिया।

उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कार वितरित किए गए, जिससे उनमें उत्साह और आत्मविश्वास का संचार हुआ।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में विद्यालय की प्रबंधक श्रीमती चित्रा नाकरा उपस्थित रहीं। अंत में, कार्यक्रम का समापन धन्यवाद ज्ञापन से हुआ।

डी.ए.वी. कोटा ने बधिरान्ध विद्यालय में भेंट कीं ब्रेल लिपि की पुस्तकें

डी.ए.वी. के प्रथम मुख्याध्यापक महात्मा हंसराज जी की जयन्ती की पूर्व सन्ध्या पर डीएवी पब्लिक स्कूल कोटा द्वारा बधिरान्ध उच्च माध्यमिक

विद्यालय कोटा के प्रांगण में देवयज्ञ किया गया। कक्षा 6 के छात्रों का एक समूह बधिरान्ध विद्यालय में यज्ञ करने गया। इस यज्ञ में संस्थान के छात्रों के साथ–साथ वहां के शिक्षकों ने भी उत्साह से भाग लिया।

विद्यालय के धर्मशिक्षक आचार्य शोभाराम आर्य ने महात्मा हंसराज के महान व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विस्तार से प्रकाश डाला।

विद्यालय की प्राचार्या ने बताया कि डीएवी संस्था केवल पढ़ाई के क्षेत्र में ही कार्य नहीं करती अपितु सामाजिक सरोकार के कार्य भी समय–समय पर करती रहती है, इसी के अन्तर्गत डी.ए.वी. कोटा द्वारा बधिरान्ध विद्यालय में पढ़ने वाले छात्रवर्ग हेतु ब्रेल लिपिबद्ध पुस्तकें उपहार स्वरूप प्रदान की गईं हैं।

विद्यालय की यज्ञशाला में भी छात्र–छात्राओं ने हंसराज दिवस पर आयोजित यज्ञ में आहुति प्रदान की। कार्यक्रम में महात्मा जी के प्रेरक जीवन की घटनाएं सुनाई गईं। महात्मा हंसराज जी के प्रेरणास्प्रद जीवन के विषय में जानकारी दी गई।

जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है। स. प्र. समु. १

{संपादक – पूनम सूरी}

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 10 मई 2026 से 16 मई 2026

हम तेरे सम्मुख मूढ़ हैं

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

मूरा अमूर न वयं चिकित्वो, महित्वमग्ने त्वमङ्ग वित्से।
शये वव्रिश्चरति जिह्वयाऽदन्, रेरिह्यते युवतिं विश्पतिः सन्।।

ऋग् १०.४.४

ऋषिः **त्रितः आप्त्यः**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**अङ्ग**) हे, (**अमूर**) अमूढ़, (**चिकित्वः**) ज्ञानी, (**अग्ने**) परमेश्वर!, (**मूराः**) मूढ़, (**वयं**) हम, (**महित्वं**) महत्ता को, (**न**) नहीं [जान पाते]।, (**त्वं**) तू, (**वित्से**) जानता है। [हमारा], (**वव्रिः**) रूपवान् आत्मा, (**शये**) सोया पड़ा है, (**जिह्वया**) जिह्वा [आदि इन्द्रियों] से, (**अदन्**) भोग करता हुआ, (**चरति**) विचरता है, (**विश्पतिः सन्**) राजा होता हुआ [भी], (**युवतिं**) प्रकृति–रूप युवति को, (**रेरिह्यते**) अतिशय पुनः–पुनः चाट रहा है।

● हे अग्ने! हे तेजोमय ज्ञानी प्रभु! हम मूढ़ हैं, तुम अमूढ़ हो। हम तो यह भी नहीं जानते कि 'महत्ता' किसका नाम है, महत्त्व प्राप्त करना किसे कहते हैं। हम तो समझते हैं कि सांसारिक दृष्टि से महिमाशाली होना, हाथी, घोड़े, रथ, सेवक आदि का स्वामी हो जाना ही महत्ता है। हमारा तो विचार है कि नचिकेता को यम ने जिस सांसारिक धन–दौलत, पुत्र–पौत्र, भूमि के राज्य आदि सम्पत्ति के प्रलोभन में फँसाना चाहा था, उस सम्पत्ति को पा लेना ही महत्ता है। पर हम मूढ़ अज्ञानियों के ऊपर रहनेवाले अमूढ़ ज्ञानी तुम जानते हो कि सच्ची 'महत्ता' क्या है।

हमारा रूपवान् आत्मा सोया पड़ा है, उसे यही चेतना नहीं है कि मैं किसलिए इस शरीर में आया हूँ, मेरा लक्ष्य क्या है मुझे किधर जाना है। वह जिह्वा आदि इन्द्रियों से निरन्तर भोगों को भोगने में आसक्त हुआ विचर रहा है और इस भोग भोगने में ही अपने जीवन की इतिश्री मान बैठा है। भगवान् ने उसे 'विश्पति' बनाया है, शरीर–नगरी का राजा बनाया हैं, जिसमें मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि अनेक प्रजाएँ निवास करती हैं। उसे इस शरीर–नगरी को ईश्वरीय साम्राज्य बनाना चाहिए था, अध्यात्म–साधना द्वारा आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत राष्ट्र बनाना चाहिए था। शरीर–राष्ट्र को भोगों से जर्जर न कर सबल, सप्राण और समनस्क करना चाहिए था। पर धिक्कार है इस आत्मा को! यह तो एक 'युवति' को चाट रहा है, अतिशय पुनः–पुनः चाट रहा है। प्रकृति ही यह युवति है जो नटी बनकर आत्मा को अपने साथ नचा रही है, भोग भुगा रही है। आत्मा प्रकृति को चाट रहा है, प्रकृति आत्मा को चाट रही है। इस प्रकार आत्मा लौकिक भोग–विलासों में आनन्द ले रहा है।

हे मेरे आत्मन्! इस मूढ़ता को त्यागो, अपने अन्दर ज्ञान की ज्योति जगाओ, 'सच्ची महत्ता क्या है' इसे जानो, सोते से उठ खड़े हो, इन्द्रियों के वशीवर्ती न हो, अपितु इन्द्रियों के स्वामी बनो। प्रकृति को न चाटकर परम प्रभु के अमृत–रस का आस्वादन करो। तुम्हारा उद्धार होगा, तुम महिमाशाली बन जाओगे।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु–भक्ति

● महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

प्रभु–भक्ति में स्वामी जी ईश्वर की सच्ची भक्ति करके मोक्ष प्राप्ति के साधनों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि उसके (प्रभु के) पात्र अर्थात् प्रभु दर्शन की इच्छा रखने वालों में प्रभु पर अटल श्रद्धा होनी चाहिए। महर्षि दयानन्द का उदाहरण देकर समझाया कि अनेक ऋषि विरोधी षड़यन्त्रकारियों ने ऋषि को प्रभु मार्ग से रोकने का असफल प्रयास किया। ऋषि की प्रभु चरणों में अगाध श्रद्धा थी अतः वे रुके नहीं। सत्य के मार्ग पर बढ़ते गए।

स्वामी जी ने कहा कि सुख–दुख, जय–पराजय, यश अपयश में धैर्य के साथ खुशहाल रहना चाहिए। बाधाएँ तो आती रहेंगी, इनकी परवाह न करते हुए सदैव उन्नति के मार्ग पर, वैदिक सिद्धान्तों पर आरुढ़ होते हुए आगे बढ़ते रहिए।

अपने अन्तःकरण में विश्वास बनाकर रखें। आपका आत्म विश्वास बड़ी से बड़ी बाधा को गिराकर सत्य पथ पर चलने में सहायक होगा।

कोई भी मानव इन मार्गों का अनुसरण कर मानव जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। वह सच्ची प्रभु भक्ति कर सकता है। मेरा पूर्ण विश्वास ईश्वर पर है। मेरी माँ ने मेरी बाहु थाम रखी है, ठगिनी माया अब मुझे नहीं ठग सकती...।

.... अब आगे

मेरा शत्रु : मेरा मित्र

दिल सियह है, बाल सब
अपने हैं पीरी में सफ़ेद।
घर के अन्दर है अँधेरा,
और बाहर चाँदनी।।

मेरे मन ! मेरा तू मित्र भी है और शत्रु भी है। तूने क्या–क्या खेल खेलाये हैं ! कैसे–कैसे नाच नचाये हैं! कहाँ–कहाँ लिये फिरा है ! कब से मेरी नाक में नकेल डाले मुझे घुमा रहा है ! कितने जन्म बीत गए, कितने युग चले गये, कितनी सृष्टियाँ बनीं और बिगड़ गईं, कब से तू मुझे लिये फिर रहा है ? बतला तो सही ! आखिर कब तक, अभी और कितने युगों, कितनी सृष्टियों, कितने प्रलयों और महाप्रलयों तक तू मेरी गर्दन पर सवार रहेगा ? बहुत हो चुकी, अब बस कर। थक गया हूँ तेरी इस यात्रा से, तेरे इन खेलों और तमाशों से। कुछ दया कर ! मेरे टूटे हुए शरीर को देख, मेरी टेढ़ी पीठ की ओर निहार, मेरी थकी हुई आँखों में झाँककर देख, मेरे श्वेत केशों को देख ! कितनी ही बार ऐसी याचनाएँ कितने ही जन्मों में कर चुका हूँ, परन्तु तू पत्थर का बना है या लोहे का, तूने मेरी कोई टेर नहीं सुनी। तू बार–बार मुझे कहीं से कहीं घसीटता हुआ लिये जा रहा है, मेरा एक–एक अंग टूटा जाता है। मेरे शरीर कई बार पिस गये–कभी तो विषय–वासनाओं के नुकीले काँटों में उलझा देता है, तब एक–एक नस–नाड़ी से रक्त प्रवाहित हो जाता है। मैं तड़पता हूँ और तू मेरी तड़प को देखकर खिलखिलाकर हँस देता है। ओ रे निर्दयी ! कभी तू क्रोध के जलते अंगारों की अंगीठी में मुझे फेंक देता है, मेरे शरीर का एक–एक रोम कम्पायमान हो जाता है, सब–कुछ जलने लगता है, आँखें लाल अंगारा बन जाती हैं, सारा शरीर ही जलने लगता है और तू इस तमाशे को चुपचाप देखता रहता है। तूने मेरा सब कुछ लूट लिया है। मेरे देह–राज्य में तूने विप्लव मचा दिया। न आँखें काबू में रही हैं, न हाथ, न पाँव, न दूसरी इन्द्रियाँ। यह सारे का सारा देह–राज्य, जिसका मैं राजा कहलाता हूँ, बागी हो चुका है। मेरी आज्ञा बिना ही यह कभी ज्वर को मेरी राजधानी में ले आता है, कभी किसी और रोग को। मैं चाहता कुछ और हूँ, यह करता कुछ और है। इसी प्रकार ओ मन ! तूने मेरे आनन्द के केन्द्र में भी हलचल मचा दी है। ओ षड्यन्त्र रचनेवालों में शिरोमणि ! तूने मेरा सब कुछ लुटा दिया है। मैं अब न राजा हूँ, न धनी, कोई भी सम्पत्ति मेरे पास नहीं रही। सब–कुछ तू छीनकर ले गया तो फिर अब मुझे कंगाल को छोड़ दे। मेरी इस दयनीय अवस्था में भी, जबकि मुझमें एक पग और आगे रखने की शक्ति नहीं रही, तू चाबुक पर चाबुक लगाये जा रहा है। मेरी वेदना का, मेरी पीड़ा का, मेरी चिल्लाहट का और हाहाकार का तुझे कोई विचार नहीं आता ! बस, अब बहुत हो चुकी, अब

और सहन की शक्ति नहीं है। मैं अब तेरे चंगुल से मुक्त होता हूँ परन्तु ओह ! यह क्या ? तू फिर मुझे लिये जा रहा है ? कहाँ पटकेगा तू अब मुझे ?

आकाशवाणी–

यह नहीं सुनेगा कुछ भी। यह तो तेरा सत्यानाश ही कर देगा। बचना है, तो एक ही उपाय है और वह यह कि अब तू इस पर सवार हो जा और इसे नकेल डालकर दृढ़ता से पकड़ रख ! और फिर देख, यही मन जो तेरा शत्रु बना हुआ है, तेरा मित्र बनता है या नहीं। इसकी कोई बात न मान। यह खटाई खाने को माँगे तो इसे लवण दे, यह सैर करने को कहे तो कोठरी में बन्द कर दे, यह कोठरी में बैठे रहने को कहे तो इसे लम्बी यात्रा पर ले जा।

मन लोभी, मन लालची,
मन चंचल, मन चोर।
मन की मति चलिए नहीं,
पलक–पलक मन और।।

परिवर्तन–

अब तो तू प्यारे ! मित्र बन गया न ? कितना अच्छा है तू, कितना आज्ञाकारी, कितना भला है तू ! मेरे कितने ही बिगड़े काम सुधार दिये। मेरा हर काम कितनी ही तेज़ी से तू कर देता है और अब काम समाप्त करके किस उत्सुकता से तू फिर *'ओ३म्'* के जाप में लग जाता है। याद है तुझे उस दिन की बात, जब मैंने तुझे कहा था 'आज भगवान् के पास ले चलो।' तब तूने कहा, 'मेरी गति वहाँ नहीं। हाँ, भगवान् के द्वार पर ले चलूँगा। उसे खटखटाकर भीतर जाने की आज्ञा भी ले दूँगा, परन्तु अन्दर नहीं जा सकूँगा।' और तब मैंने कहा था 'हाँ ! ऐसा ही सही–, और तू मुझे मेरे अच्छे मन ! अपने ऊपर सवार करके ले गया था। कितनी मनोहर थी वह यात्रा ! कैसे दृश्य आये थे ! कितने सुन्दर बाजे बजते थे ! ऐसा प्रतीत होता था कि कोई बहुत निपुण वंशी बजा रहा है। तब एकदम ऐसी सड़क की ओर तुम मुड़े थे कि जहाँ सन्नाटा था, सब–कुछ ठहरा हुआ था – निस्तब्ध, एकदम निस्तब्ध ! वायु भी नहीं चलती थी। प्राण अपान में मिलकर धीरे–धीरे नहीं, अपितु तेज़ी से, परन्तु पूर्ण शान्ति के साथ जा रहा था। उस समय एकदम सहस्रों सूर्य और चाँद भी एक–साथ प्रकाशित हो उठे थे। इतना प्रकाश था और ऐसा प्रकाश था कि जिसकी उपमा नहीं दी जा सकती। उसी क्षण एक अतीव सुन्दर–मनोहर रंग–बिरंगा फाटक खुला था। उसके खुलते ही न जाने तू कहाँ चला गया, और तू ही क्यों ? तब तो मुझे अपना भी पता नहीं रहा। न सूर्य रहे थे, न चाँद, न ही कुछ और। फाटक खुलते ही वह कुछ देखा जिसका वर्णन करने के लिए वाणी सारा बल लगाती है, परन्तु एक शब्द तो क्या, एक अक्षर भी नहीं कह सकती। आँखों ने देखा तो है पर वे मेरी आँखें न थीं, वे कोई और ही थीं। मेरे मित्र ! एक बार फिर वहीं ले चलो। तुझसे मैं अब और कोई काम तो लेता नहीं, इसी मुख्य कार्य के लिए तुझे निश्चित कर रक्खा है। मेरा तू कोई और काम कर या न कर, परन्तु इस काम को करने पर मैं तुझे बाधित करता हूँ। मुझे तू वैकुण्ठ में न ले चल, भक्त–देश में भी न ले चल, मुझे तू किसी और स्वर्ग की भी सैर न करा, मुझे तो वहीं ले चल, जहाँ प्रीतम के दर्शन से खुशहाल हो गया हूँ–

कहा करूँ बैकुण्ठ लै,
कल्पवृक्ष की छाँह।
रहिमन ढाक सुहावने,
जहँ प्रीतम गल बाँह।।

ओ मेरे मन ! तू अब कितना अच्छा हो गया है ! मेरी प्रत्येक शुभकामना को पूर्ण करने में तू भरसक प्रयत्न करता है। तुझे अब वे पहली गन्दगियाँ पसन्द नहीं होतीं, न ही वे शरारतें अब तुझे आती हैं। क्यों भैया, वे पहली बातें याद करके तुझे लज्जा तो अवश्य आती होगी ? कहो, तब आनन्द था या अब ? दूसरों की गर्दनें काटने में अधिक खुशी मिलती थी या अब दूसरों के जीवन बचाने में अधिक प्रसन्नता होती है ? अपने उस जीवन, इस जीवन को देख। भगवान् का धन्यवाद कर कि तेरे अन्दर परिवर्तन पैदा हो गया–

पहले यह मन काग था,
करता जीवन–घात।
अब तो मन हंसा भया,
मोती चुन–चुन खात।।

क्रमशः

आर्य समाज की वैश्विक विचारधारा

● आचार्य ओम प्रकाश आर्य

इस विश्व में लगभग 195 देश हैं। पूरे विश्व की आबादी लगभग 8 अरब 9 करोड़ है। इस धरती पर 7,168 भाषाएँ बोली जाती हैं। 4000 से अधिक मान्यता प्राप्त धर्म, संप्रदाय और विश्वास हैं। इन देशों के अलग–अलग शासकों की अलग–अलग विचारधाराएँ, अलग–अलग रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाज, बोलचाल, शिक्षा–दीक्षा, अमारी–गरीबी, पूजा–पद्धति, आस्थाएँ। इतनी विविधिताओं के बीच एक मत का होना असंभव है। इसी कारण विश्व में कहीं–न–कहीं युद्ध, टकराव चलते ही रहते हैं। इन सबके मध्य प्रबल मतावलम्बी पूरी धरती पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते हैं भले ही उनका मत तर्क पर खरा न उतरता हो। भले ही उसमें हिंसा, संकीर्णता, अज्ञानता हो, विज्ञान के विरुद्ध बातें हों। उससे मानव का कल्याण हो या न हो। किसी को दुःख मिले या सुख। इन सबके मध्य हमारे आर्य समाज की सनातन वैदिक विचारधारा है जो आदिसृष्टि से अब तक चली आ रही है। कालखंड में इसमें ह्रास हुआ, किन्तु पूर्णतः विलुप्त नहीं हुई।

एक समय था जब इस भूमंडल पर केवल वैदिक धर्म था। मानवमात्र वेदपथ पर चलता था। उसी की शिक्षा का प्रचार था। एक सर्वव्यापक ईश्वर के सब आराधक थे। कोई मत–मतान्तर–सम्प्रदाय–मजहब नहीं था। सबकी मान्यता, उपासना पद्धति एक थी। इसका सबसे बड़ा प्रमाण आचार्य मनु के शब्दों में–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवाः।।
मनु. 2.20

अर्थात् **"इस देश में उत्पन्न ब्राह्मण से पृथिवी के संपूर्ण मनुष्य अपने–अपने चरित्र की शिक्षा पावें।"**

वे लिखते हैं–

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च।।
मनु. 2.6

अर्थात् **"सम्पूर्ण वेद धर्ममूल हैं और वेद के जानने वालों की स्मृति तथा शील भी धर्ममूल है। इस प्रकार साधुजनों का आचार और आत्मा का सन्तोष भी धर्ममूल है।"**

आचार्य मनु कहते हैं कि इस भूमंडल के समस्त मानव आर्यावर्त देश में जन्मे ब्राह्मणों से अपने चरित्र की शिक्षा ग्रहण करें। उसका तात्पर्य यह हुआ कि पृथिवी पर शिक्षा देनेवाला एकमात्र आर्यवर्त देश ही था। इस देश से मानवों को आचार–विचार की शिक्षा लेने को कहा गया है जिसका आधार केवल और केवल वेद है। वेद से ही ऋषियों ने स्मृतिग्रन्थ लिखा जो धर्म की कोटि में माना गया। वेद और स्मृतियों के अनुगामी उस पथ पर चलने वाले साधुजन जिन्होंने तदनुकूल अपना आचरण बनाया, उनका आचरण भी जनसामान्य के लिए अनुकरण करने को कहा है। आत्मा को तुष्टि अर्थात् आनन्द, प्रसन्नता वेदानुकूल आचरण से मिलती है। ऐसे लोगों से शिक्षा लेने के लिए पूरे विश्व का आह्वान है।

आर्य समाज की दृष्टि वैश्विक है। वह पूरे विश्व को श्रेष्ठ बनाना चाहता है। वह वेद की आज्ञा का पालन करता है। वेद कहता है–

वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा
सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्।।
यजु 32.8

पदार्थ–"हे मनुष्यो! **यत्र**=जिसमें, **विश्वम्**=सब जगत्, **एकनीडम्**=एक आश्रय वाला, **भवति**=होता है, **तत्**–उस, **गुहा**=बुद्धि में **निहितम्**–स्थित, **सत्**=नित्य चेतन ब्रह्म को, **वेनः**= पण्डित विद्वान् जन, **पश्यत्**=ज्ञानदृष्टि से देखता है।"

सारा संसार एक घोंसले के समान है। विद्वान् जन इस संसार को एक परिवार के समान देखते हैं, वहीं अविद्वान् लोग स्वार्थ, संकीर्णता, अज्ञानता के कारण अविद्यादि दोषों से ग्रसित होकर इस संसार में उपद्रव, हिंसा, ईर्ष्या, द्वेष, वैर, शत्रुता, अहंकार, लघुता आदि से अशान्ति पैदा करते हैं, एक–दूसरे से लड़ते हैं, न सुख से रहते हैं, और न सुख से रहने देते हैं। उदारचरित्र वाले संसार को परिवार मानते हैं–

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

अर्थात् अपना और पराया का भाव छोटी बुद्धिवाले रखते हैं, उदार चरित्र वाले तो अखिल वसुधा को अपना परिवार मानते हैं। आर्य समाज की दृष्टि ऐसी ही है इसलिए वह **"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"** का उद्देश्य लेकर कार्य करता है। वह सारे संसार में वेद का आलोक फैलाना चाहता है। मानवमात्र के कल्याण के लिए दिन–रात चिन्तनशील रहता है। आज विश्व में आर्य समाज की ज्योति चमक भी रही है। विश्व स्तर का सम्मेलन इसका सबसे बड़ा प्रमाण है।

क्या ऐसा कभी था? हाँ, ऐसा था। महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के एकादशसमुल्लास में लिखते हैं– **"सृष्टि से ले के पाँच सहस्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था।"** उन्होंने प्रमाण दिया है– **"चीन का भगदत्त, अमेरिका का बब्रुवाहन, यूरोपदेश का विडालाक्ष अर्थात् मार्जार के सदृश आँखवाले, यवन जिसको यूनान कह आए और ईरान का शल्य**

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

गतांक से आगे...

नया वर्ष कब ?

● स्वामी चिदानन्द सरस्वती

सूर्य और भूमि के बीच में जब चन्द्रमा आ जाता है, तब ये तीनों एक ही रेखा पर रहते हैं। इसी स्थिति को अमावास्या कहते हैं। चन्द्रमा की गति अधिक होने के कारण वह सूर्य की अपेक्षा से आगे चला जाता है। इस प्रकार सूर्य–चन्द्रमाओं के बीच में 12⁰ अंशों (डिग्रियों) की दूरी का अन्तर पड़ जाता है। वही अन्तर एक तिथि (दिन) कहलाता है। इस प्रकार उनकी बीच की दूरी 12°,24°,36°,...... अंश बढ़ते–बढ़ते पुनः एक रेखा पर आने के लिए अर्थात् उनका एक वृत्त पूरा होने के लिए (360°÷12° =) 30 तिथियाँ (दिन) बनतीं हैं, अर्थात् एक मास पूरा हो जाता है। **{यह वर्णन मास के अमान्त पक्ष का है, उसी प्रकार पूर्णिमान्त पक्ष को भी समझा जा सकता है}** इस प्रकार एक अमावास्या से दूसरी अमावास्या तक एक मास (30 दिन) पूरा हो जाता है। **{षष्टिर्मासस्याहोरात्राणि (शतपथ. 6.2.2.35) एक मास में साठ दिन–रात होते हैं अर्थात् तीस दिन होते हैं।}** वेदमन्त्र के माध्यम से यह वर्णन किया जा चुका है कि एक वर्ष में बारह मास होते हैं अर्थात् एक वर्ष में (12 मास x 30 दिन) 360 दिन होते हैं। इसका भी वर्णन वेदमन्त्रों में है। यथा– **"ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः..."** (अथर्व. 1.1.1)। यहाँ **'त्रिषप्ताः'** शब्द का अर्थ इस प्रकार है–

1. तीन से सात तक की विषमसंख्याओं का योग– 3+5+7=15

2. तीन बार सात 3x7=21(+)15=36

3. तीन और सात का योग 3+7=10(x)/ 36x10=360

इस प्रकार सृष्ट्यादि में ही वेद ने बताया कि एक वर्ष में 360 दिन होते हैं और एक मन्त्र को देखें–

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि
नभ्यानि क उ तच्चिकेत।
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न
शंकवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः।।
(ऋ. 1.164.48)

संवत्सर रूपी कालचक्र में बारह मास रूपी परिधियाँ, तीन प्रमुख (ग्रीष्म, वर्षा, शरद्) ऋतुरूपी नाभियाँ और 360 दिन रूपी आरें होते हैं, जो कि अत्यन्त चलायमान हैं।

इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों में भी संवत्सर में 360 दिन होने का स्पष्ट वर्णन है– **त्रीणि च ह वै शतानि षष्टिश्च संवत्सरस्याहोरात्राणि** (गोपथ ब्रा. 1.1.5.5)।

शास्त्रों में काल की परिगणना मानवीय एवं ब्राह्म वर्षों में की जाती है। ब्राह्मवर्ष के विषय में यहाँ संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। इस सृष्टि की स्थिति एवं प्रलय के काल को मिलाकर एक ब्राह्मदिवस कहते हैं। इसका परिमाण मानवीय गणना में 8,64,00,00,000 वर्ष रहता है। ऐसे तीस दिनों का एक ब्राह्ममास होता है। बारह ब्राह्ममासों का एक ब्राह्मवर्ष होता है। ऐसे सौ ब्राह्मवर्षों को मिलाकर उसे परान्त काल कहते हैं। एक ब्राह्मवर्ष में (12x30 = 360) तीन सौ साठ ब्राह्मदिन रहते हैं। परान्तकाल में (360x100=36,000) छत्तीस हजार ब्राह्मदिन रहते हैं। इसे ही महर्षि दयानन्द ने मोक्षकाल माना है। मुक्तात्मा परान्तकाल तक अर्थात् छत्तीस हज़ार बार इस सृष्टि की उत्पत्ति एवं प्रलय होने तक परमात्मा के आनन्द का अनुभव कर पुनः जन्म लेता है, अस्तु। यहाँ विशेषतः ध्यातव्य है कि ब्राह्मवर्ष में भी 360 ही दिन होते हैं, ऐसा हमारे शास्त्र एवं ऋषि–मुनियों ने स्वीकारा है।

भारतीय गणितपद्धति में कालगणना दो प्रकार से की जाती है– 1. सौरमान, 2. चान्द्रमान। चन्द्रमा का भूमि के चारों ओर परिक्रमा करने के लिए 29.5 दिन लगते हैं। यह चान्द्रमास कहलाता है। बारह चान्द्रमासों का एक चान्द्रवर्ष होता है, जिसमें 29. 5X12=354 दिन होते हैं। पर सौरमान के अनुसार भूमि को सूर्य के चारों ओर परिक्रमण करने के लिए 365.25 दिन अपेक्षित हैं। इस प्रकार चान्द्रवर्ष एवं सौरवर्ष में 11.25 दिनों का अन्तर होता है। इस अन्तर को प्रत्येक 32 मासों के बाद चान्द्रवर्ष को 13 मासों का मानकर किया जाता है। इसी तेरहवें मास को अधिकमास, अधिमास, मलमास आदि कहते हैं। इस प्रकार वर्ष में 12 मास या कभी– कभी 13 मास होते हैं। इसका भी स्पष्ट उल्लेख हमारे ऋषि–मुनियों ने किया–**"द्वादश वा वै त्रयोदश वा संवत्सरस्य मासाः"** (शतपथ. 2.2.3. 27)। चन्द्रमा से मास बनने के कारण उसे **"मासकृत्"** (ऋ. 1.105.18) कहते हैं।

इस प्रकार भारतीय कालगणना सूर्य चन्द्रादियों पर आश्रित है। हमारा कालान्तर (कैलेण्डर) खगोलविज्ञान से सम्बन्धित है। प्राकृतिक घटनाओं से सम्बन्ध रखने वाला परिज्ञान कभी भी असत्य नहीं हो सकता। जैसे कि–सूर्यग्रहण सदा अमावास्या के दिन ही होता है, चन्द्रग्रहण पूर्णिमा के दिन ही होता है। इस प्रकार देखें तो आधुनिक विज्ञान के बिना प्राकृतिक विज्ञान को जानने वाला व्यक्ति कालान्तर (कैलेण्डर) के बिना ही चन्द्रमा को देखकर मास, शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, पूर्णिमा, अमावास्या, अष्टमी आदि तिथियों को जानलेता है। पर आधुनिक विज्ञान को जानने वाला कैलेण्डर के बिना कुछ भी नहीं जान सकता।

अभी तक हमने प्रमाण एवं युक्तियों से जान लिया कि चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन नये वर्ष को मनाना ही युक्तियुक्त है। अब इस वर्ष की विशेषताओं का वर्णन किया जाता है–

1\.

चैत्रे मासि जगद् ब्रह्म ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रे तु सदा सूर्योदये सति।।
(हेमाद्रि)

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के प्रथम सूर्योदय तक परमेश्वर ने सम्पूर्ण सृष्टि का निर्माण कर मानवों को उत्पन्न किया था अतएव इसे सृष्टिसंवत्सर और मानव संवत्सर कहते हैं।

2. इसी दिन मानवों के कल्याण निमित्त परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा नाम के चार ऋषियों के अन्तःकरण में वेदज्ञान प्रकाशित किया इसलिए इसे वेदसंवत्सर भी कहते हैं।
3. इसी दिन कलियुग संवत्सर आरम्भ होता है।
4. इसी दिन पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर का राज्याभिषेक हुआ था इसीलिए युधिष्ठिर संवत्सर भी इसी दिन आरम्भ होता है।
5. अत्यन्त पराक्रमी, धर्मात्मा और न्यायप्रिय विक्रमादित्य के नाम से प्रसिद्ध संवत्सर भी इसी दिन आरम्भ होता है।
6. शालिवाहन ने हुणों को पराजित कर दक्षिण भारत में एक अच्छा धार्मिक राज्य स्थापित किया था। तब से शालिवाहन शक संवत् भी आरम्भ हुआ था। यह संवत्सर भी इसी दिन आरम्भ होता है।
7. महर्षि दयानन्द ने वैदिक धर्म एवं प्राचीन संस्कृति की रक्षा के लिए और मानव समाज की उन्नति के लिए इसी दिन आर्यसमाज की स्थापना की थी।
8. इस नये वर्ष के समीप में ही अर्थात् चैत्र शुक्ल नवमी के दिन मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम का राज्याभिषेक हुआ था।

नये वर्ष के दिव्य सन्देश

इस नये वर्ष के दिव्य सन्देशों को ग्रहण कर उनसे प्रेरित होकर हम इस पर्व को महदानन्द से मनाने के लिए इस प्रकार प्रयास करें–

1. यह सृष्टि की उत्पत्ति का दिन है। उत्पत्ति के समय यह जिस प्रकार अत्यन्त निर्मल, शुद्ध–पवित्र, सभी प्राणियों के लिए स्वास्थ्यदायक एवं मनोहर था, उसी प्रकार बनाये रखने के लिए, सुरक्षित रखने के लिए हम सब कटिबद्ध हों। वातावरण के प्रदूषण को समाप्त करने हेतु वृक्षादियों की रक्षा करते हुए उनकी वृद्धि करें तथा प्रतिदिन यज्ञ–यागों का अनुष्ठान करें।
2. यह मानव संवत्सर है। सभी मनुष्य एक भगवान् की संतानें हैं इसलिए हम सब जाति, मत, देश, लिंगादि भेदों को भुलाकर एवं ईर्ष्या, द्वेष, असूयादि दोषों को त्यागकर परस्पर अत्यन्त प्रीति, प्रेम, अनुरागादियों से मिलजुलकर रहें और अपनी मानवता को प्रदर्शित करें। "वसुधैव कुटुम्बकम्" सम्पूर्ण जगत् ही एक परिवार है इस पवित्र भावना से वर्तें।
3. यह वेदोत्पत्ति का संवत्सर है। वैदिक धर्म तथा वैदिक संस्कृति भूमण्डल पर जब तक परिव्याप्त थी, तब तक सभी मनुष्य सर्वविध सुख–शान्तियों से पूर्ण सन्तृप्त थे अतः हम आज भी विभिन्न समयों में स्वार्थवश स्थापित व प्रचलित साम्प्रदायिक सिद्धान्तों एवं विभेदों को त्यागकर भगवत्प्रदत्त दिव्य वेदज्ञान को प्राप्तकर, उसका अनुसरण कर ऋषि–मुनियों के समान और श्रीराम, श्रीकृष्ण जैसे महापुरुषों के समान सुख–शान्तियों को प्राप्त कर सकते हैं, जिससे एक दिव्यमानवसमाज का निर्माण होगा।
4. यह श्रीराम, युधिष्ठिर, विक्रमादित्य, शालिवाहन जैसे धर्मपारायण महाराजाओं के धर्मराज्य का स्थापनादिवस है अतः हम सब अधर्म, अन्याय, अत्याचार, अनाचार, दुराचार, भ्रष्टाचार, अविनीति जैसी नीच भावनाओं से सन्तप्त राजनीति को भस्मकर, धर्मराज्य की स्थापना के लिए आगे बढ़ें एवं दृढ़ संकल्प लें। **"धर्मो रक्षति रक्षितः"** (गीता) यदि हम धर्म की रक्षा करते हैं. तो धर्म हमारी रक्षा करता है। **"यतो**

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

पदवाक्यप्रमाणज्ञ श्री पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

● डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री द्वारा लिखित यह लेख धारावाहिक रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। योजनानुसार प्रकाशित हो जाने पर एक ट्रैक्ट के रूप में प्रकाशित किया जायेगा। – सम्पादक

जन्म तथा आरम्भिक शिक्षा जन्म–14 अक्टूबर 1892 ई., जन्म स्थान–मल्लूपोता, थाना–बंगा, जिला–जालन्धर (पंजाब)। माता–श्रीमती परमेश्वरी देवी, पिता–श्री पं. रामदास सारस्वत, गोत्र– पाठक। 9 वर्ष की आयु तक माता–पिता दोनों का देहान्त हो चुका था। प्रारम्भिक शिक्षा विभिन्न स्थानों से निकट के रिश्तेदारों की सहायता से प्राप्त की। जौहल, जिला–लायलपुर (वर्तमान पाकिस्तान), गुरुदासपुर (पंजाब), मल्लूपोता, बंगा तथा छाना हाईस्कूल (जालन्धर) आदि स्थानों में रहकर 10वीं कक्षा उत्तीर्ण की। अंग्रेज़ी, संस्कृत और उर्दू आदि सभी विषयों में प्रथम श्रेणी के छात्र रहे। 1912 ई० में ऋषि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ हाथ लगा, जिसकी गहरी छाप पड़ी। आर्षग्रन्थों–अष्टाध्यायी, महाभाष्य तथा वेद आदि पढ़ने की तीव्र लालसा जगी, एतदर्थ दृढ़ संकल्प लेकर साढ़े उन्नीस वर्ष की अवस्था में 5 जून (1912 ई.) की रात्रि को गृह त्याग कर दिया। गृह त्याग के अनन्तर कनखल पहुँचे। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार) के आचार्यों द्वारा यह कहने पर कि "अष्टाध्यायी से व्याकरण नहीं आता।" अष्टाध्यायी के प्रति पूर्ण निष्ठावान ब्रह्मदत्त जी ने उत्तर दिया कि **अष्टाध्यायी के 8 अध्यायों में 32 पाद हैं। यदि सम्पूर्ण जीवन में एक पाद भी पढ़ दिया तो जीवन सफल समझूँगा। शेष अगले जन्म में पढ़ूँगा।**

गुरु की प्राप्ति तथा अज्ञातवास

सौभाग्य से आपको स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती जैसे ऋषि दयानन्द के भक्त, त्यागी, तपस्वी, बालब्रह्मचारी तथा आर्षग्रन्थों के परम अनुरागी गुरु मिल गये। स्वामी पूर्णानन्द जी ने गुरुकुल बदायूँ तथा काशी में शिक्षा पाई थी। आप गुरुकुल कांगड़ी में भी काशी के बड़े विद्वान् पं. काशीनाथ शास्त्री से अष्टाध्यायी आदि ग्रन्थ पढ़े थे। स्वामी पूर्णानन्द जी ने अष्टाध्यायी के 100 सूत्र प्रतिदिन पेड़ पर चढ़कर याद किये थे। ऐसे गुरु को पाकर ब्रह्मदत्त जी धन्य हो गये। गुरुजी ने ही उन्हें 'ब्रह्मदत्त' नाम दिया। पूर्व नाम तो 'लब्भुराम' था और पिताजी प्यार से 'मौजगोविन्द' कहकर पुकारा करते थे। गुरु के समान ही मेधावी ब्रह्मदत्त जी ने एक दिन में अष्टाध्यायी का एक पाद याद कर 32 दिनों में ही पूरी अष्टाध्यायी कंठस्थ कर ली।

स्वामी पूर्णानन्द जी परिव्राजक थे और उनकी वृत्ति यायावरी थी। अतः ब्रह्मदत्त जी अपने गुरुजी के साथ निरन्तर भ्रमण में रहते थे। कोई एक स्थान या पाठशाला स्वामी की थी नहीं, और गुरु के आदेश से गृहस्थों के यहाँ से भिक्षा भी लेनी पड़ती थी। कनखल, मुरादाबाद, वृन्दावन, लखनऊ, रायबरेली, अमेठी, डलमऊ, मसूरी, देहरादून, कश्मीर, पठानकोट, लखनौती, गंगोह, मुल्तान, रघुराजगंज आदि नगरों की पैदल एवं रेलादि यात्रा में भिक्षावृत्ति से रहकर लगभग 6 वर्ष का समय (जून 1912 से सितम्बर 1918 तक) स्वामीजी के चरणों में रहकर व्यतीत किया। इस काल में गुरुजी से अष्टाध्यायी, वेदांग प्रकाश, उपनिषद् तथा ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का आपने गम्भीर अध्ययन और अनुशीलन किया। अन्त के लगभग 3 वर्ष डलमऊ, जिला–रायबरेली के गंगा तट पर गुरुजी के साथ एकान्तवास में रहकर अष्टाध्यायी, महाभाष्य (अंशतः) तथा निरुक्तादि की शिक्षा प्राप्त की। युवक ब्रह्मदत्त के अतिरिक्त स्वामी पूर्णानन्द जी के दो शिष्य और थे। 1. ब्रह्मचारी प्यारेलाल, जो बाद में 'प्रियरत्न आर्ष' तथा संन्यस्त होकर स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक नाम से विख्यात आर्य विद्वान् हुए। 2. ब्रह्मचारी अखिलानन्द जी–जिनका आगे चलकर जीवन का अधिकांश भाग झरिया (बिहार) में व्यतीत हुआ। आपने वाल्मीकीय रामायण का अनुवाद प्रक्षेपानुसन्धान पूर्वक किया है (प्रकाशक–रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत–हरयाणा)।

स्वामी पूर्णानन्द जी में एक भयंकर दोष था, वे महा क्रोधी थे। बात–बात में ब्रह्मदत्त जी को बहुत मारते–पीटते थे। सितम्बर 1918 में ज्वरावस्था में ही ब्रह्मदत्त जी को बहुत पीट दिया। ब्रह्मदत्त जी गुरुजी से पृथक् हो गये। लगभग सवा वर्ष अज्ञातवास (ग्राम–अरनिया, जिला–बुलन्दशहर) में रहे। संग्रहणी या अतिसार रोग से पीड़ित थे। ठाकुर हरज्ञान सिंह (बाद में शास्त्रार्थ महारथी बने ठाकुर अमर सिंह जी के बड़े भाई) के संरक्षण में युवक ब्रह्मदत्त जी की बड़ी सेवा हुई। ठाकुर अमर सिंह के चाचा मुन्शी साँवल सिंह तथा महाशय चेतराम सिंह जी की चिकित्सा से रोग दूर हुआ और स्वास्थ्य ठीक हो गया। पं. ब्रह्मदत्त जी अपने गुरु के प्रियतम शिष्य थे। गुरु ने अपने प्रिय शिष्य की खोज में आकाश–पाताल एक कर दिया। परन्तु ब्रह्मदत्त जी पुनः उनके हाथ नहीं लगे। पाणिनि महाविद्यालय बहालगढ़ (सोनीपत–हरयाणा) के आचार्य श्री पं. विजयपाल जी ने मुझे यह बताया था कि शिष्य–वियोग में अन्ततः उनके गुरु स्वामी पूर्णानन्द जी ने मध्ययुगीन प्रसिद्ध आचार्य कुमारिल भट्ट की भाँति 'तुषाग्नि' में जलकर अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली। अपने गुरु की एवंविध मृत्यु के वृत्त को जानकर ब्रह्मदत्त जी हतप्रभ रह गये और अपने भावी जीवन को व्याकरण–अध्ययन के लिए ऋषि दयानन्द प्रदर्शित आर्ष प्रणाली को प्रचलित करने में ही समर्पित करने का संकल्प ले लिया। अपने गुरु स्वामी पूर्णानन्द जी का प्रसंग आते ही गुरुजी (पं. ब्रह्मदत्त जी) भावुक हो जाते थे। इन्होंने अपने संक्षिप्त जीवनवृत्त में लिखा है–**मेरे में जो अवगुण हैं वे मेरे हैं, यदि कोई गुण है वा जो ऋषि दयानन्द और आर्ष ग्रन्थों में गहरी भक्ति है, वह सब उक्त स्वामी जी की ही देन है।** पं. ब्रह्मदत्त जी के सतीर्थ्य स्वामी ब्रह्ममुनि ने अपनी जीवनी ***'निजजीवनवृत्तवनिका'*** में यह लिखा है–'ब्रह्मचारी ब्रह्मदत्त जी गुरु जी के भक्त और अतिकृतज्ञ थे, जो बार–बार गुरु की मार खाते, किन्तु सहन करते और अनेक बार उनसे पृथक् होकर पुनः निकट आ जाते। जब पं. ब्रह्मदत्त जी ने यह पढ़ा तो वे स्वामी ब्रह्ममुनि जी से रूष्ट गये और कहा कि उन्होंने यह लिखकर ठीक नहीं किया।' पं. ब्रह्मदत्त के द्वितीय सतीर्थ्य ब्रह्मचारी पं. अखिलानन्द जी (झरिया) कहा करते थे कि 'गुरुजी (स्वामी पूर्णानन्द जी) के सच्चे शिष्य पं. ब्रह्मदत्त जी हैं। उनके गुण–कर्म–स्वभाव पूर्णतः इनमें विद्यमान हैं।' आगे चलकर पं. ब्रह्मदत्त जी के जीवन में शिष्यों के प्रति कठोर अनुशासन के साथ–साथ अन्तस्तल में जो शिष्य–वत्सलता पाई जाती है उसे उनकी गुरुभक्ति का प्रभाव समझना चाहिए।

अध्ययन–अध्यापन तथा शुद्धि का कार्य

सन् 1920 ई. में वीतराग स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज के साधु आश्रम हरदुआगंज (पुल काली नदी), जिला–अलीगढ़ में पं. ब्रह्मदत्त जी के कारण ही लघुकौमुदी, सिद्धान्तकौमुदी सर्वथा बहिष्कार हुआ। अष्टाध्यायी–क्रम से संस्कृत शिक्षण का कार्य प्रारम्भ हुआ। इस कार्य में पं. ब्रह्मदत्त जी को पं. शंकरदेव जी तथा पं. बुद्धदेव जी (धार निवासी) का भी सहयोग मिला। स्वामी सर्वदानन्द जी के निश्चयानुसार नवम्बर 1921 ई. के अन्त में अमृतसर (पंजाब) से 4 मील दूर मजीठा रोड पर गण्डा सिंह वाला गाँव में 'विरजानन्द आश्रम' की स्थापना की गई। अमृतसर में यह आश्रम 1925 ई. तक सफलतापूर्वक संचालित होता रहा। 1923 ई. में लगभग दस मास ब्रह्मदत्त जिज्ञासु ने स्वामी श्रद्धानन्द तथा महात्मा हंसराज जी की अध्यक्षता में भरतपुर–आगरा आदि स्थानों में मलकानों की शुद्धि का कार्य अपने सहपाठी पं. अखिलानन्द जी (झरिया) के साथ बड़ी ही सफलता से किया। मलकाने नाममात्र के मुसलमान थे। मूलतः ये राजपूत थे, हिन्दुओं के समान ही पर्व–त्योहारों को हिन्दू–रीति से मनाते थे। मौलवी से निकाह पढ़ाने के पश्चात् हिन्दू रीति से भी अपने पुत्र–पुत्रियों का विवाह करते थे। इन्हीं लोगों को शुद्ध करके वापस राजपूतों में पूर्णरीति से सम्मिलित कर लिया गया।

क्रमशः

अध्यापक आवास, स्टेशन रोड, अमेठी (उ.प्र.)–227405

गतांक से आगे...

उत्पत्ति का विज्ञान क्या है?

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

{श्री हरिश्चन्द्र वर्मा जी के अपनी अनन्त यात्रा पर चले जाने के बाद उनके सुपुत्र द्वारा वर्मा जी द्वारा लिखित लेखों की कुछ अप्रकाशित प्रतियाँ 'आर्यजगत्' को भेजी गई थी। समय–समय पर उस सामग्री को आर्यजगत् के पाठकों को परोसा जाता है। 'उत्पत्ति विज्ञान' पर वर्मा जी का लेख धारावाहिक रूप में प्रस्तुत है।–सम्पादक}

हम दिखला आये हैं कि आदि सृष्टि में समस्त गुणालंकृत आर्य जाति का ही जन्म–हुआ था। आगे चलकर उन्हीं में से विष के फूल फले, जो पहिले आर्य थी वे अपने व्यवहारों के कारण अनार्य हो गई तथा विशुद्ध आर्यों से जातिच्युत होकर दस्यु, दास, राक्षस, असुर, महिष, कपि, नाग आदि नीच नामों से पुकारे जाने लगी।

अतः सदुपदेशक ब्राह्मणों के पास न पहुँच सकने के कारण क्षत्रियों की जातियाँ क्रिया लुप्त होने से पतित हो गईं। वही – पौण्ड्र, औड्र, द्रविड़, कम्बोज, पारद, खश, पहलव, चीन, किरात, झल्ल, मल्ल, दरद और शक नाम धारिणी अनार्य जातियाँ हो गई। यह सत्य है कि पहिले इसी प्रकार के व्रात्य ही जातिच्युत किये जाते थे।

कहते हैं कि आदि काल से ही ऋषियों ने मानव समाज को उनके गुण, कर्मानुसार ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहा था। (यह वर्ण उनके कर्मानुसार – विद्या – शिक्षा से परिवर्तित भी होता था) उदाहरण के लिये – वाल्मीकि – मेहतर जाति में जन्म लेकर डाकू बन गये थे, किन्तु सत्संग वश, संन्यासियों द्वारा, वेद शास्त्रों का अध्ययन कर ब्रह्मर्षि वाल्मीकि बन गये।

जन्मना जायते शूद्रः कर्मणा
(संस्कारात्) द्विज उच्वते।
(मनुस्मृति)

जन्म से सब शूद्र ही होते हैं किन्तु विद्याध्ययन के बाद जो जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही कहा जाता है। इसी विषय को महाभारत में कितने सुन्दर शब्दों में कहा गया है –

एकवर्णमिदपूर्वं विश्वभासित् युधिष्ठिर।
कर्म क्रिया विशेषण चतुर्वर्ण्यं प्रतिष्ठितम्।।

अर्थात् हे युधिष्ठिर ! आरम्भ में सारे विश्व में एक ही वर्ण था। इसी बात को ऋषि भृगुजी ने कहा है कि–**"न विशेषोऽस्तिवर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्। ब्रह्मणा पूर्व सृष्टिं हि कर्मभिर्वर्ण्यमतां गतम्।।"** अर्थात् पहिले वर्णों में कोई विशेषता नहीं थी। सारा जगत् ब्रह्ममय था क्योंकि ब्रह्मा का बनाया हुआ था। बाद में अपने–अपने कर्मों से लोग विभिन्न वर्गों को प्राप्त हुए। ऐसे ही योगीराज भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में भी कहा है–

"चातुर्वर्ण्यमया सृष्टं गुणकर्मविभागशः" अर्थात् – चारों वर्ण गुण, कर्म के अनुसार बनाये गये हैं। रावण उत्तम कुल–ऋषि पुलस्त का नाती और विश्वश्रवा का बेटा, वेद एवं शास्त्रों का ज्ञाता होने पर भी, राक्षसी वृत्ति में बह गया अर्थात् नीच श्रेणी में आ गया। अतः जो–जो अपने कर्मों से पतित होते थे, आर्यों की तरफ से उनका दण्ड यही था कि उन्हें समाज से बहिष्कृत कर दिया जाए, ताकि आर्य एवं ऋषि लोग सुरक्षित रह सकें।

किन्तु कुछ काल के पश्चात्, उन जातिच्युत किये गये लोगों की टोलियाँ आगे चलकर विभिन्न देशों में जाकर, बढ़ीं, पुष्ट हुई, और आर्यों से लड़ीं, अन्त में परास्त होकर पुनः विभिन्न प्रान्तों में चली गई। उदाहरण के लिये अति प्राचीन काल में आर्य लोग, लोभीवाणिक को 'पणिक' कहते थे। वणिक, पणिक या पणि लोभी होते ही हैं अतः आर्य जनता इन पर भी नाराज़ हुई और विवश होकर इनको भी उसी दक्षिण दिशा में जाना पड़ा। इस प्रकार आर्यों द्वारा निकाली गई टोली भारत के अन्य सीमा प्रान्तों अर्थात् चारों दिशाओं में चली गई। आन्ध्रलोग आन्ध्रालय अर्थात् ऑस्ट्रेलिया को गये। झल्ल लोग अफ्रीका में जाकर जुलू हो गये, चीनी लोग, चीन में जाकर बसे और किरात बलूचिस्तान में बस गये। (हम लिख आये हैं कि) नट, कंजर, बेडिया, संभाल आदि बहुत सी जातियाँ, इसी देश के जंगलों में रहने लगीं।

इसी तरह अन्य पतित जातियाँ भी, आर्यावर्त्त से बाहर विभिन्न भागों में जाकर बस गईं और अपने–अपने नामों से, उन–उन देशों का नाम रखकर वर्षो बाद स्वयं उन्हीं नामों से प्रसिद्ध हो गईं। अतिप्राचीन काल में सबसे प्रथम जो जातियाँ आर्यावर्त्त देश से निकलीं और अन्य–अन्य भू भागों में बसी हैं उनका यह दिग्दर्शन मात्र है।

कुछ काल के बाद आर्यों, ऋषियों ने विचार किया कि उन देशों में जाकर पुनः उन्हें आर्य धर्म में दीक्षित करना चाहिये। अतः धर्मोपदेश करने, सभ्यता आचार–प्रचार करने के लिये भी कई बार यहाँ से आर्य लोग पूर्वोक्त देशों के विभिन्न भूभागों में जाते रहे। उदाहरण के लिए – इतिहास से पता चलता है, कि 'ईरान, सीरिया, ग्रीस और चीन आदि देशों में शिक्षा देने के लिए यहाँ से ऋषि विद्वान् जाया करते थे और उन देशों के लोग भी शिक्षा ग्रहण करने के लिये आर्यावर्त्त में आया करते थे किन्तु उनके समय–समय पर आने से आर्यों में भी अवैदिकता का समावेश होने लगा। इस तरह से जाति बहिष्कार, धर्म प्रचार और पुनः जाति सम्मेलन आदि जितने कुछ आर्योचित मृदु उपाय हुए उन सबके परिणाम में लाभ के साथ–साथ कुछ न कुछ हानि भी हुई।'

सबसे प्रथम जिन विदेशियों के भारत–प्रवेश का इतिहास मिलता है, वह आस्ट्रेलिया निवासियों का है। इसके बाद का विषय हम आगे लिखेंगे।

यह स्मरण रखना चाहिये कि, चीन, यवन और शक आदि शब्द विदेशी नहीं, किन्तु आर्यावर्त्तीय और बहुत पुराने हैं। **चीन** शब्द के विषय में प्रो. हीरेन, कहते हैं कि चीन शब्द हिन्दुओं का है और हिन्दुस्तान से ही आया है। चीना शब्द का अर्थ गहरा है। अमर कोश मे मृगों का भेद वर्णन करते हुए एक प्रकार के मृग को भी चीन कहा गया है। इन प्रमाणों से मालूम होता है कि चीन शब्द के असली अर्थों के कारण ही – गहराई में रहने और तेज़ तवियत होने से ही चीन वालों को चीनी कहा गया है। इसी तरह **'यवन'** शब्द भी पुराना है। पुराणों में **'तुर्वसो यवना जाताः'**–अर्थात् तुर्वसु से यवन पैदा हुए, लिखा है। तुर्वसु ययाति का पुत्र था। इससे ज्ञात होता है कि 'यवन' शब्द भी नवीन नहीं है। इस शब्द के विषय में स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है कि मिश्र और बेबिलियन वाले भी बहुत समय पूर्व, शक, ग्रीक, लोगों को यवन ही कहते थे। शक भी पुराना शब्द है। **'नरिष्यन्तः शकाः पुत्राः'** वाक्य से प्रकट होता है, कि शक, इक्ष्वाकु का पौत्र था। शक इतना पुराना शब्द है कि यह ऋग्वेद में भी आया है।

ये सब जातियाँ आर्य – (महाभारत, अनुशासन पर्व में एक अद्वितीय ऐतिहासिक सत्य सुरक्षित है। तदनुसार (146/13–19) शक, चीन, काम्बोज, पारद, शबर, पल्लव, तुषार, यवन, वेण, कंकण, सिंहल, मद्रक, किष्किन्धक, पुलिन्द, कछ, आन्ध्र, नीरग, गन्धिक, द्रविड़, बर्बर, चूचुक, किरात, पार्वतेय, कोल, चोल, खष, आरुक, दोह, आदि म्लेच्छता को प्राप्त हुए) कभी वे शुद्ध संस्कृत भाषी आर्य थे। इसी पर्व में अन्यन्त्र भी शक, यवन, काम्बोज, द्रविड़, कलिंग, पुलिन्द, उशीनर, कोलिसर्प और महिष को क्षत्रिय कहा है। ये भी ब्राह्मण के अदर्शन से संस्कार हीन होकर शूद्र हो गये। (68.21–33) इसी पर्व में अन्य स्थान पर, मेकल, द्रविड़, पौण्ड्र, काण्व शिर, शौण्डिक, दार, दास, चोर (=चोल), शबर, बर्बर, किरात और यवनों को क्षत्रिय लिखा है। ये भी ब्राह्मण के अदर्शन से शूद्र हुए। (3.70.19–20) इनमे से शकदार, पहलव, बर्वर = पारसी आदि निस्सन्देह ईरान की जातियाँ हैं। उनकी भाषा कभी शुद्ध संस्कृत थी। कौन उन्हें भारतीय भाषाओं के समूह से पृथक् कर सकता है अतः ईरान की सम्पूर्ण भाषायें संस्कृत की विकृति हैं। यही सत्य है। (वैदिक वाङ्मय का इतिहास पृ. 88)

तात्पर्य यह कि आर्यों ने अपने अन्दर से जिन पतित आर्यों को निकाल कर, दस्यु, राक्षस, आदि कहा है और चीनी, यवन, शक, आदि शब्दों से पुकारा है, वे शब्द आर्यों के पास आदिम काल में भी उपस्थित थे और उनका कुछ अर्थ था। उसी अर्थ के अनुसार जिनमें जैसा गुण देखा, उनका वैसा ही नाम रख दिया और उन्होंने भी वे नाम अपने साथ ले जाकर अपने नवीन देशों के भी वही नाम रक्खे और स्वयं भी अब तक उन्हीं नामों को स्वीकार किये हुए है। (किन्तु कतिपय देशों के नाम अब परिवर्तित भी हो गये हैं। (देखिये 'वैदिक सम्पति' पृ. 328–331 में)

अनार्य जंगलियों के पूर्व 'आर्य' थे। 'वाण' शब्द ऋग्वेद – 6.75.17) का है, और सभी जानते हैं कि, वेद, विश्व की सबसे प्राचीन पुस्तक है। इसी प्रकार दाह संस्कार अर्थात् मृतकों को जलाने की प्रथा आर्यों में थी, इसलिये वे विदेशी नहीं थे। विदेशी लोगों के पूर्वज जो एक समय मौलिक आर्यो द्वारा पृथक् किये गये थे, वे आर्यों से द्वेष के कारण विपरीत कार्य करते थे, जैसे– **'मृतकों को मिट्टी में गाड़ देना।'**

कुछ समय बाद आर्यों के आवागमन से वे पुनः थोड़ा संस्कृत जैसे बोलने लगे थे।

तदुपरांत, वे उसी के आधार पर मिली जुली भाषा में बोलने लगे, इसलिये अधिकांश विदेशी भाषायें संस्कृत से मिलती जुलती हैं, उदाहरण के लिये–'असली सोने में चाहे जितनी मिलावट की जाए, किन्तु कसौटी एक ऐसा पत्थर है कि उससे ज्ञात हो जाता है। (देखिये भाषा

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

मूषक राज की जय हो

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

(नर–पशु अंतरंग वार्ता) **अरण्य कांड**–अचानक वन में हलचल और खलबली मच गई। सभी वन्य जन्तु भयभीत हो गए। आज वन्य जन्तुओं की एक आवश्यक बैठक होनी थी जिसकी अध्यक्षता वनराज सिंह महाशय ने करनी थी। बैठक में सभी वन्यजीव पहुँच गए लेकिन सभा के अध्यक्ष वनराज न पहुँचने पर सब बेचैन हो गए। चारों ओर खोज की गई पर वनराज नहीं मिले। तब वन्य समिति के उपाध्यक्ष गजराज (हाथी) ने समिति के मंत्री शृंगाल (गीदड़) को डाँटते हुए कहा–यही है तुम्हारी व्यवस्था? अचानक समिति अध्यक्ष गायब हो गए और तुम्हें खबर तक नहीं।

"महोदय, कल तक तो वनराज यहीं थे, पता नहीं रात को ही क्या बात हो गई कि उनके दर्शन नहीं हो गए।" शृंगाल ने विनम्र भाव से कहा।

तब गजराज ने आदेश दिया कि चारों तरफ अपने गुप्तचर भेजो और मालूम करो कि कहीं वनराज किसी संकट में न फँस गए हों या किसी षडयंत्र के शिकार न हो गए हों।"

फिर चारों ओर नभचर, थलचर गुप्तचर भेजे गए और लगभग एक घंटे में उसका परिणाम भी सामने आ गया।

ग्राम्य काण्ड–जब वन्य गुप्तचर वनराज को ढूँढते हुए एक गाँव में पहुँचे तो वहाँ ढोल–नगाड़े बज रहे थे। शामियाना लगा हुआ था। खुशियाँ मनाई जा रही थीं। एक बड़ा आयोजन होने जा रहा था जिसमें पटवारी, कानूनगो, तहसीलदार और जिलाधीश महोदय को आमंत्रित किया गया था।

गुप्तचर दल के एक सदस्य ने एक ग्रामीण से पूछा कि यह आयोजन क्यों हो रहा है ? तब उसने बताया कि हमारे गाँव के एक भेड़पालक किसान ने अपनी बुद्धिमता का परिचय देते हुए एक शेर को रस्सों से जकड़ा हुआ है। उसी के सम्मान के लिए यह आयोजन हो रहा है।

फिर उस सदस्य ने पूछा कि उस भेड़पालक ने यह कैसे कर दिखाया?

तब ग्रामीण के बताया कि उसकी भेड़ जंगल में नहीं मिल रही थी। वह निराश होकर रात के समय अंधेरे में जब घर में पहुँचा तो घर के बाहर खूँटे के पास किसी जानवर को सोते हुए पाया, उसने समझा कि मेरी भेड़ सीधे अपने खूँटे के पास आकर लेट गई है और उसने अपनी भेड़ समझ कर खूँटे की रस्सी से उसे बाँध दिया।

आधी रात के बाद जब वनराज की नींद खुली तो उसने स्वयं को रस्सों से जकड़ा हुआ पाया। वह ज़ोर से गरजा, रस्सों को तोड़ने की कोशिश की पर मजबूत रस्से नहीं टूटे और थक कर शेर वहीं गिर पड़ा।"

"क्या आप हमें वह शेर दिखा देंगे?" गुप्तचर दल के सदस्य ने पूछा।

"हाँ, क्यों नहीं वह सामने वाले मकान के पीछे रस्सों से जकड़ा हुआ है।"

गुप्तचर दल के सदस्य वहाँ पहुँचे और उन्होंने देखते ही पहचान लिया कि वे हमारे ही वनराज हैं।

अरण्य कांड–वन्य गुप्तचरों ने गजराज तथा सचिव शृंगाल को सूचना ही कि हमारे वनराज गाँव के एक मकान में खूँटे से बँधे हुए हैं। उन्हें एक भेड़पालक किसान ने बंदी बनाया है। अब प्रश्न यह था कि वनराज को कैसे बन्धन मुक्त किया जाए। वन्य समिति ने गुप्त रूप से छापामार दल का गठन किया जिसके सदस्य थे–कौआ, खरगोश, गिलहरी और चूहा। सबको अलग–अलग काम सौंपे गए। कौआ उड़–उड़ कर निगरानी रखेगा कि कहीं कोई हमें देख तो नहीं रहा। खरगोश का काम यह होगा कि यदि कोई वनराज के पास आने की कोशिश करेगा तो वह उसे अपने सुन्दर शरीर से ललचा कर बहुत दूर ले जायेगा। गिलहरी का काम यह होगा कि वह फुदकती हुई वनराज के पास जायेगी और प्रणाम करके कहेगी कि हम आपकी प्रजा, आपको बन्धन मुक्त करने आए हैं। आपके पास चूहा आएगा, आप उसे न मारें। वह आपकी सहायता करेगा। चूहे का काम यह होगा कि वह वनराज को प्रणाम करके खूँटे की रस्सी को अपने तेज दाँतों से कुतर–कुतर कर काट देगा।

लगभग साढ़े–पाँच बजे सवेरे छापामार दल चुपके–चुपके वनराज के पास पहुँचा। सबने अपने दायित्वों का भली भाँति पालन किया और वनराज बन्धन मुक्त सकुशल वन में पहुँच गए।

ग्राम्य काण्ड–इधर गाँव में उत्सव का आयोजन होना था। जोर–शोर से तैयारी हो रही थी। टेंट लगे हुए थे, कुर्सियाँ बिछाई गई थीं, पकौड़े तले जा रहे थे। चाय के प्याले सजाए जा रहे थे। जिलाधीश महोदय ने माला पहनाकर शेर को रस्सी से जकड़ने वाले भेड़ पालक का माला पहनाकर सम्मान करना था। ठीक समय पर जिलाधीश महोदय पधारे। भेड़ पालक ने जिलाधीश महोदय के चरण स्पर्श किये। उन्होंने उसे गले से लगाया। उन्होंने ग्राम प्रधान से कहा कि मैं सबसे पहले उस शेर को देखना चाहता हूँ। सारी भीड़ जिलाधीश महोदय के साथ बँधे हुए शेर को देखने के लिए चल पड़ी। लेकिन ये क्या हुआ, शेर वहाँ था ही नहीं। सब हक्के–बक्के रह गए।

अरण्य काण्ड–इधर जंगल में वनराज के सकुशल पहुँचने पर खुशी का माहौल था। कोयल गा रही थी, भौरों का गुंजन हो रहा था, मोर नाच रहा था, गधा भी दूसरों के स्वर में स्वर मिला रहा था। वनराज चूहे को अपने हाथ में लेकर उसे मीठे फल खिला रहे थे। उन्होंने प्रसन्न होकर चूहे को जंगल की नागरिकता प्रदान कर दी। साथ ही उन्होंने खेद भी प्रकट किया कि शिकार का भक्षण करके मुझे नींद आ गई थी तो मैं गाँव में जाकर बेहोशी की हालत में सोने गया जिसके कारण मुझे यह सब झेलना पड़ा। मैं आप सबका धन्यवादी हूँ कि आप सब की बुद्धिमत्ता के कारण मेरे प्राणों की रक्षा हो गई।

ग्राम्य काण्ड–इधर गाँव में शेर के गायब होने पर जिलाधीश महोदय आगबबूला हो गए। उन्होंने कहा, यह मेरा ही नहीं पूरे प्रशासन का अपमान है। उन्होंने ग्राम वासियों से कहा कि यदि वो छुड़ाने वाला न पकड़ा गया तो इसकी सजा पूरे गाँव वालों को भुगतनी पड़ेगी। साथ ही उन्होंने तत्काल जाँच कमेटी की घोषणा भी कर दी। जाँच कमेटी ने स्थान का निरीक्षण किया और देखा कि वहाँ कुतरी हुई रस्सी के रेशे पड़े हुए हैं। उन्हें निश्चय हो गया कि यह काम किसी चूहे का हो सकता है। तब जिलाधीश महोदय ने वैज्ञानिकों को आदेश दिया कि ऐसा आविष्कार किया जाए जिससे अपराधी पकड़ा जा सके। तब वैज्ञानिकों ने एक ऐसा आविष्कार किया जिसमें चूहा आकर स्वयं फँस जाए और उस आविष्कार को नाम दिया– चूहेदानी।

अरण्य काण्ड–दूसरी ओर जंगल में चूहे का खूब आतिथ्य हो रहा था। तोता उसके लिए सेब कुतुर कर ले आता। प्यास लगने पर भौंरा उसके मुख में मधु कण बरसा देता। गधा उसे अपनी पीठ पर, बैठाकर जंगल की सैर करा देता। पर एक दिन चूहे को अपने गाँव की याद आ गयी वह चुपके से अपने गाँव की ओर चल पड़ा और रात के समय ज्यों ही अन्न के दाने खाने के लिए वह एक घर में घुसा तो चूहेदानी में फँस गया।

ग्राम्य काण्ड–अचानक चूहे के चूहेदानी में फँसने से गाँव में खुशी की लहर फैल गई। सबको संतोष था कि अपराधी चूहा पकड़ा गया। भीड़ इकट्ठा हो गई। गाँव के प्रधान ने घोषणा की जिलाधीश महोदय को इसकी सूचना दी जाएगी।

अरण्य कांड–इधर चूहे के अचानक गायब होने से जंगल में बेचैनी छा गई। इस बार वनराज ने गुप्तचर दल को उसी स्थान पर भेजा, जहाँ उनको बंदी बनाया था। गुप्तचर दल ने आकर सूचना दी कि चूहे को चूहेदानी में उसी स्थान पर बन्दी बना लिया गया है जिस स्थान पर वनराज को बंदी बनाया गया था। यह भाग्य का ही खेल है कि कभी चूहे ने वनराज से मुक्त कराया था और आज वनराज को चूहे को मुक्त कराना है। वनराज ने अपना दूत बनाकर शृंगाल को गाँव के प्रधान के पास भेजा। शृंगाल ने प्रधान जी को स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि चूहे को जंगल की नागरिकता मिली हुई है। इसे आप न तो मार सकते हैं और न बंदी बना सकते हैं। इस पर हम ही कार्यवाही करेंगे। यदि आप हमारे आदेश का पालन नहीं करेंगे तो समस्त जंगलवासी ग्राम वासियों पर आक्रमण कर देंगे। अन्त में प्रधान जी को अपनी हार माननी पड़ी और चूहे को मुक्त करना पड़ा।

ग्राम्य–अरण्य कांड–अब समस्या यह थी कि चूहे को कहाँ का नागरिक (स्थायी निवासी) माना जाए ? वह रहने वाला तो था गाँव का पर उसको नागरिकता मिली थी जंगल की। वह रहता तो था जंगल में पर उसको खाना–पीना मिलता था गाँव से। जंगल वाले उससे प्रसन्न थे तो गाँव वाले नाराज। वह प्रायः गाँव और शहर के बीच जमीन में बिल बना कर छिप कर रहता था। तब ग्रामीणों और वनचरों की एक बैठक हुई। उसमें यह तय करना था कि चूहे को ऐसे स्थान पर शरण दी जाए जहाँ पर किसी को आपत्ति न हो और चूहे के आत्मसम्मान पर भी ठेस न पहुँचे।

अन्त में बैठक में यही तय हुआ कि चूहे को ऐसे सार्वजनिक स्थान मंदिर में शरण या अश्रय दिया जाए जहाँ उसका जीविकोपार्जन हो सके। निर्णय के उपरान्त जब चूहे को प्रतिमा के पास बैठाया गया और जब भक्तों ने उसे चूहे को आँखें बन्द किये हुए देखा तो अचानक उनके मुँह से निकला–'मूषकराज'

इसे क्या आप किस्मत का खेल नहीं कहेंगे कि एक अपराधी प्रवृत्ति का चूहा 'मूषक राज, बनकर मंदिर का प्रसाद चट कर रहा है और भक्तों के द्वारा सम्मान भी प्राप्त कर रहा है, 'मूषक राज की जय हो'

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम,
ज्वालापुर (हरिद्वार)
मो. 9639149995

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

● भद्रसेन

श्री रामचन्द्र जी का भारतीय साहित्य, इतिहास, परम्परा, धर्म, संस्कृति में एक गौरवपूर्ण स्थान है। श्रीराम के बिना इनकी कहानी अधूरी है। महर्षि वाल्मीकि ने सर्वप्रथम रामकथा का निरूपण किया है, जो कि श्रीराम के समकालीन थे। आज राम कथा सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में जहाँ रूपान्तरित है, वहाँ विदेशी भाषाओं में भी प्राप्त होती है।

महर्षि वाल्मीकि ने श्रीराम को धर्म का साक्षात् रूप कहा है। "**रामो विग्रहवान् धर्मः**–3.35.13" अर्थात् उन्होंने धर्म की सभी व्यवस्थाओं को अपने जीवन में पूरे रूप में ढाला, उतारा था जिसका सीधा–सा भाव यह है कि यदि हम धर्म को स्पष्ट रूप में समझना चाहते हैं या प्रत्यक्ष देखना चाहते हैं तो धर्म के समग्र रूप को हम श्री राम के जीवन में चरितार्थ हुआ प्राप्त करते हैं इसीलिए श्रीरामचन्द्र जी को मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम कहा जाता है।

आदिकवि महर्षि वाल्मीकि की रामायण के प्रारम्भ में आता है कि शिकारी द्वारा क्रौंचपक्षी के वध को देखकर महर्षि का हृदय द्रवीभूत हो गया और वह काव्य रूप में प्रवाहित हो उठा। अतः यत्र–तत्र–सर्वत्र घूमने वाले नारद मुनि से पूछा कि मैं ऐसे मनुष्य का जीवन चरित लिखना चाहता हूँ, जो धर्मज्ञ, विशेषज्ञ, धीर, वीर दयार्द्र आदि भावों से भरपूर हो। तब नारदमुनि ने अपने परिचित दशरथ नन्दन श्रीराम का निर्देश किया। महर्षि ने हर स्थिति में मनुष्य रूप को चरितार्थ करने वाले, मर्यादाओं के पालक, श्रीराम के जीवन का चित्रण किया।

समय के साथ रामकथा जब विविध भाषाओं में प्रवाहित हुई, तो आगे आने वाले कवियों ने अपने काव्य को प्रभाव पूर्ण बनाने के लिए श्रीराम को मनुष्य के स्थान पर देव, अवतार, ईश्वर रूप में चित्रित करना प्रारम्भ कर दिया। भक्तिकाल के कवियों ने तो इस बात को और भी अधिक बढ़ा दिया।

श्री राम से सम्बद्ध इस साहित्य से स्पष्ट होता है, कि यहाँ कुछ गन्थों ने दो रूप आपस में मिला दिए हैं, जबकि भगवान और मानव रूप में आए जीवों की स्थिति पूरी तरह से अलग है। अर्थात् ईश्वर और जीव का स्वभाव, गुण, कर्म भिन्न हैं। इसी भेद को दर्शाने के लिए ऋग्वेद ने 1,164,20 में कहा है–

"द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया
समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरुयः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्ननन्यो
अभिचाकशीति।"

बहुत सारी स्थितियाँ समान होने से जो सखा हैं और समान (वृक्ष) संसार से सम्पृक्त हैं। उन दोनों में एक सुखपूर्वक भोक्तृत्व (अश्–भोजने) करता है और दूसरा (अन्य) बिना भोक्तृत्व के देखता मात्र है।

ईश्वर–भगवान को ही हम ईश्वर, व्यवस्थापक, सब का स्रष्टा, कर्म–फल दाता मानते हैं और इसीलिए वह सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, आनन्द–स्वरूप, नित्य आदि गुण, स्वभाव, कर्म वाला है। ईश्वर की नित्यता ही एकरस, एकरूप, अटल, अटूट, कूटस्थ अजर, अमर, अमृत शब्दों से भी अभिहित है। ऐसी नित्यता ही देश, काल में सीमित नहीं होती है अतः वह स्थान विशेष (भूमिस्थ ग्राम–नगर या आकाशस्थ चौथे, सातवें) से सम्बद्ध नहीं होती, क्योंकि वह सर्वव्यापक है और वह समय विशेष (युग, वर्ष, मास, दिन) से भी नहीं पुकारा जाता है, यतोहि वह सर्वदा वर्तमान, नित्य, अज, शुक्र, शुद्ध है।

भगवान् का वर्णन करने वाले हमारे सारे शास्त्र परमात्मा को सभी स्थानों, सभी कालों में व्यापक, सृष्टिकर्त्ता, कर्मफलदाता, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और जन्ममरण रहित अर्थात् अजर, अमर रूप में चित्रित करते है, शास्त्रों की इन भावनाओं को गुरुवाणी ने इस रूप में प्रतिपादित किया है–

"इक्को सिमरिया नानका,
जल थल रहा समाय।
दूजा क्यों सिमरिया,
जम्में ते मर जाय।।"

इस शब्द (पद्य) के "जल–थल रहा समाए" में **ईशावास्यमिदं सर्वम्**–यजु. 40–1 "**स पर्यगात्**"–40,8 जैसे शतशः मन्त्रों की सर्वव्यापकता को संकेतित किया गया है। तभी तो सर्वसाधारण जन में भी यह प्रसिद्ध है–हर जगह मौजूद है–या भगवान कण–कण में समाया है। सर्वव्यापक ही सर्वत्र प्रसृत जगत् रचना की क्रिया को कर सकता है और वही सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान हो सकता है। यतोहि कर्त्ता की क्रिया वहीं होती है जहाँ (वह कर्ता) विद्यमान होता है। अनुपस्थिति में क्रिया नहीं होती।

प्रस्तुत शब्द की दूसरी पंक्ति में यह भाव है कि ऐसे का स्मरण नहीं करना चाहिए। जो जन्म लेता और मरता है। जन्म–मरण का अभिप्राय है कि ऐसा पूर्णतः नित्य नहीं है और वह विकार, परिवर्तन वाला होने से कष्ट–क्लेश, रोग–दुःख के चक्र में पड़ता है। ऐसा ईश्वर न होने से स्मरणीय भी नहीं है।

जीव–जीव भगवान का भक्त, उपासक, उससे नियन्त्रित, जगत् में रहने वाला है। अतः अपने आप में अल्पज्ञ, सीमित सामर्थ्य सहित, सुख–शान्ति, आनन्द का अभिलाषी, शरीरधारी है। देहधारी ही बाल–युवा–वृद्ध रूपी परिवर्तन में आता है। अशक्त, थका हुआ, क्लान्त, अशान्त होता है। उसमें समय के साथ अनेक प्रकार के परिवर्तन, विकार तथा तत्सम्बद्ध रोग, शोक, भूख–प्यास, कष्ट–क्लेश भी प्रकट होते हैं। भौतिक देहधारी किसी परिवार में पैदा होता है अतः वह किसी का पुत्र, भाई, पति, पिता भी बनता है तभी वह कुल, गोत्र, पिता वाले नाम से पुकारा जाता है। जैसे श्रीराम राघव, रघुपति, दाशरथी कहलाते हैं। इससे आगे से आगे रिश्तेदारियाँ, मित्रतायें जैसे परिचय सामने आते हैं, तब वह किसी के अति निकट, किसी से कम–निकट और दूरियाँ भी सिद्ध होती हैं जबकि ईश्वर सभी के लिए एक–सा मित्र, सम्बन्धी है।

शरीरधारी ही भूमि पर बसे ग्रामों–नगरों से जुड़ता है, जैसे कि श्रीराम अयोध्या से सम्बद्ध हैं और श्रीकृष्ण मथुरा, द्वारिका से जुड़े हैं। ऐसे देहधारी ही काल के चक्र में आने वाले गिने जाने वाले युवा, वर्ष, मास, दिन से सम्बद्ध होता है। जैसे श्रीराम त्रेता तथा चैत्र शुक्ल नवमी के जन्म दिन से संकेतित होते हैं और श्री कृष्ण द्वापर से तथा रोहिणी नक्षत्र युक्त भाद्रपदा अष्टमी से परिचय में हैं।

जीव का यह सारा रूप, सारी स्थिति भोक्ता शब्द से अधिक स्पष्ट होती है। जीव भोक्ता तभी बनता है जब वह प्राण, अन्तःकरण, इन्द्रिय और शरीर से सम्बद्ध, संयुक्त होता है। जीवात्मा इनसे सम्पृक्त होकर ही भोक्तृत्व क्रिया को करने में सक्षम होता है। अपने आप में अकेला कुछ भी नहीं कर सकता। तभी तो कठोपनिषद् के ऋषि ने कहा है–"**आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः**–1,3,4" और चरक में ये शब्द हैं–"**शरीरेन्द्रिय सत्त्व (मनः) आत्म संयोगः**–1,42 "**सत्वात्मशरीरं च त्रयमेतत्त्रिदण्डवत्**"–चरक सूत्रस्थान–1,46।

हाँ, यह ध्यान रहे अपने स्वरूप की दृष्टि से जीव भी ईश्वरवत् नित्य है पर इसकी नित्यता शरीर से सम्पृक्त होने पर प्रभावित होती है इसीलिए शरीरजन्य परिवर्तन जीव के कहलाते हैं क्योंकि शरीर आत्मा की चेतना से ही सारा व्यवहार करता है अर्थात् कर्मफल के अनुरूप प्राप्त देह के निमित्त से ही ऊपर वर्णित परिवर्तन जीव में उपलक्षित होते हैं।

ऐसे ही प्रकृति भी अपने मूल रूप–स्वरूप में नित्य है और प्रकृति जब सर्जन प्रक्रिया में आती है तभी वह परिवर्तन विविध विकारों में परिणत होती है इसीलिए इन तीनों को अज नाम से अभिहित किया गया है।

निःसन्देह राम शब्द का प्रयोग ईश्वर और मानव दोनों के लिए समान रूप से हो सकता है। जैसे अन्य अनेक शब्द हैं और वे अनेकों के लिए प्रयुक्त हो रहे हैं। उदाहरण के रूप में–ओम्, हरि, नारायण, विशम्भर, दीनदयाल, रहीम, करीम आदि। ऐसी स्थिति में प्रयुक्त शब्द के विशेषणों, प्रकरण से ही भेद होता है, कि वह कहाँ किस अर्थ में है ? जैसे कि सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अन्तर्यामी, अज, निर्विकार सदृश विशेषण केवल ईश्वर के लिए ही प्रयुक्त होते हैं पर रघुपति, राघव दाशरथी, अयोध्यापति केवल श्रीराम के लिए ही प्रयुक्त होते हैं। स्वामी सत्यानन्द जी ने अमृतवाणी में राम शब्द का भरपूर प्रयोग किया है। वहाँ सर्वत्र ऐसे विशेषणों का प्रयोग किया है, जो केवल ईश्वर परक ही चरितार्थ होते हैं पर अनेक भक्त कवियों ने दोनों रूपों को मिलाकर भी प्रयोग किया है।

इस विश्लेषण की दृष्टि से पुरुष शब्द इसका सबसे सुन्दर उदाहरण है। पुरुष शब्द आदमी के अर्थ में प्रसिद्ध है। वेदों के पुरुष सूक्त अध्याय, तथा साम के 17–20 के अन्दर पहले चार मन्त्रों में केवल और केवल परमात्मा के लिए आया है पर आगे– **यत् पुरुषं व्यदधुः** (ऋ. 10.90.11. यजु.–31,10 अथर्व 19,6,5) में रचित के अर्थ में आता है। इसके साथ–**यथेह पुरुषोऽसत्** यजु 2–33 (**अजामेकां लोहित शुक्लकृष्णां बहीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः। अजो ह्यको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः।। (श्वेताश्वतर–4.5) वेदाहमेतमजरं पुराणं सर्वात्मानं सर्वगतं विभुत्वात्। जन्म निरोधं प्रवदन्ति यस्य ब्रह्मवादिनो हि प्रवदन्ति नित्यम्।। 3,2।।**)

सनवथ पुरुषम्–यजु. 12,79 और 35,4 में प्राप्तव्य की चाहना प्रेरणा है और यह असीम पूर्ण परमात्मा में चरितार्थ नहीं होती अतः मानव की ही यह चाहना, तथा प्रेरणा है। हाँ ! निरुक्त में आई पुरुष की परिभाषा "**पुरुषः पुरिषादः पुरशियः पूरयते र्वाः पुरयत्यन्तरित्यन्तपुरुषभभिप्रेत्य**–2,9" जगत् व्यापी परमात्मा और शरीर व्यापी आत्मा अर्थात् दोनों पर चरितार्थ होती

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

☞ पृष्ठ 04 का शेष

नया वर्ष कब ?

धर्मस्ततो जयः" (गीता) जहाँ धर्म है, वहीं विजय और सुख–शान्ति होती हैं।

5. यह आर्यसमाज का स्थापना दिवस है। आर्य का अर्थ है श्रेष्ठ, समाज का अर्थ मानवता युक्त मनुष्यों का समुदाय। आर्यसमाज का अर्थ है कि उत्तमोत्तम, श्रेष्ठ मनुष्यों का समाज। **"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"** (ऋ. 9.63.5) इस विश्व में व्याप्त अज्ञान–अन्धकार एवं दुष्टशक्तियों का विनाश कर पूरे विश्व को आर्य बनावें, एक दिव्य मनुष्यों के समाज का निर्माण करें। स्वार्थ, अज्ञान, भूत–प्रेत, यन्त्र–तन्त्र, अन्धविश्वास आदियों को समूल नष्ट कर सभी मनुष्यों को ज्ञानी व विवेकी बनावें।

संवत्सरों के नाम

"प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।
अंगिराः श्रीमुखो भावो युवा धातेश्वरस्तथा।।
बहुधान्यः प्रमाथी च विक्रमोऽथ वृषस्तथा।
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवो व्ययः।।
सर्वजित्सर्वधारी च विरोधी विकृतिः खरः।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथ–दुर्मुखौ।।
हेमलम्बी विलम्बी च विकारी शार्वरीप्लवः।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ।।
प्लवंगः कीलकः सौम्यः साधारणविरोधकृत्।
परिधावी प्रमाथी च आनन्दो राक्षसोऽनलः।।
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थो रौद्र–दुर्मती।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षी क्रोधनः क्षयः।।"

निगमनीडम् (वेदगुरुकुलम्)
महर्षि दयानन्द मार्ग,
पिडिचेड़, मेदक–502278 (तेलंगाणा)
सम्पर्क–6281250379

☞ पृष्ठ 06 का शेष

उत्पत्ति का विज्ञान ...

विज्ञान का विषय वैदिक सम्पति में) आर्य लोग गौ रक्षक और उनका पालन करते थे, किन्तु कतिपय विदेशी लोग ऐसा नहीं करते थे, स्वार्थसिद्धि के पश्चात् उसे मार देते थे, किन्तु आर्य लोग उसे मिट्टी में गाड़ देते थे। आज भी गौ के मर जाने के बाद, उसे हिन्दू लोग मिट्टी में गाड़ देते हैं।

यजुर्वेद में आये हुए मंत्र **'शतमदीना'** को अरब वाले 'मदीना' कहते हैं। मंत्र है **'शरदः शतमदीना'** अर्थात् सौ वर्ष तक अदीन होकर रहें। ईरान के पास 'अरब' है, वैदिक भाषा में 'अर्वन' घोड़े को कहते हैं। जिस प्रकार गौओं के बड़े चारागाह को 'ब्रज' और भेड़–बकरी वाले देश को 'गन्धार' कहते हैं, उसी तरह जहाँ अच्छी जाति के घोड़े रहते हैं, उसको 'अर्व' कहते हैं यही 'अर्व' – 'अरब' हो गया, आज भी अरबी घोड़ा सर्वोपरि समझा जाता है। मुसलमान होने के पूर्व वहाँ के हिन्दू अपने को ब्राह्मण कहते थे, परन्तु आचार, भारतीय हिन्दुओं जैसा नही था, वहाँ की कतिपय जातियाँ अत्याचारी, मूर्तिपूजक थीं, क्योंकि वहाँ हिन्दू के चिह्न पाये गये हैं। कश्मीर के लोग भी पहिले ब्राह्मण थे, कुछ समय बाद मुसलमानों के शासन के समय अधिकांश लोग शेख हो गये।

महाभारत युद्ध के बाद से क्रमशः पुनः भारत से विदेशों में और विदेशों से भारत में आर्यों और विदेशियों के आवागमन, व्यापार तथा विवाह आदि के सम्बन्ध से जाति मिश्रण बहुत हुआ, अतः आज विशुद्ध आर्य कोई नहीं रह गया है। भारत में नौ सौ वर्ष मुसलमानों के शासन में हिन्दुओं के अनेक साहित्य नष्ट कर दिए गए, अपार धनों को जो लूटा वह अलग है। औरंगजेब आदि के अत्याचार और शासन के भय से भारत के सर्वाधिक बंगाल राज्य के हिन्दू भय से मुसलमान हो गये थे। उदाहरण के लिये कतिपय सून्नी मुसलमानों के घरों से श्रीकृष्ण और श्रीराम सीता की मूर्तियाँ पाई गई हैं।

मुसलमानों के बाद अंग्रेज़ों ने तो भारतीय आर्य साहित्य, जिनमें भारद्वाज आदि ऋषियों के विविध विद्या–विज्ञान का सूत्र था उन्हें चुराने, औरों को बिगाड़ने में कोई कसर उठा नहीं रखी। आदिम आर्यों ऋषियों को, जिनसे संसार सभ्य और विद्वान् हुए, उन्हें अनार्य और जंगलियों की संज्ञा दे दी। इस विषय को हम आगे चलकर लिखेंगे।

आर्यों के देश का नाम आर्यावर्त्त था और कालान्तर में इसी देश के एक प्रसिद्ध आर्य राजा भरत के नाम से इसका नाम भारतवर्ष हो गया।

आर्यावर्त्त अर्थात् भारतीय इतिहास दो प्रकार का है– प्रथम ऋषिकाल का शुद्ध संहिता काल से लेकर आधुनिक ब्राह्मण काल तक। दूसरा–रावण काल से लेकर आधुनिक शूद्र काल तक का है। वेदों का सर्वप्रथम अनर्थ रावण ने किया था।

यह लाखों वर्ष का इतिहास है, जब आर्यों ने विचार किया कि हमसे बिछुड़े हुओं को आर्य धर्म में दीक्षित करने के लिये विदेशों में पहुँचना चाहिये तब इस निर्णय के पश्चात् सबसे पहिले पुलस्त मुनि धर्म प्रचार के लिये आस्ट्रेलिया पहुँचे थे, पर वहाँ के राजा तृणविन्दू की पुत्री से उनका विवाह हो गया, उसी से विश्रवा पैदा हुआ जो प्रसिद्ध राजा रावण का पिता था, लंका निवासियों का क्या हाल हुआ था, यह सबको विदित है, रावण काल से पशुवध यज्ञ प्रारम्भ हुआ था। वेदमंत्र में 'अज' शब्द के अर्थ दो हैं, 'बीज' और 'बकरा'। ऋषि कहते थे, बीज अर्थात् अन्न से यज्ञ होना चाहिये, क्योंकि पहिले भी होता था। किन्तु रावण को समर्थकों ने उसका अर्थ बकरा कर दिया। किन्तु श्रीराम द्वारा, रावण बध के पश्चात् आर्यावर्त्त में वेदों का अनर्थ नहीं हुआ। द्वापर युग में कुछ काल के बाद 'महाभारत' समय के पहिले से पुनः अनार्यता कहीं–कहीं फैलने लगी। कौरव, पाण्डव दो भाग हो गये। कई जगह अत्याचार बढ़ने लगा। योगीराज महापुरुष श्रीकृष्ण ने अंत में कौरव दल को समझाने का बहुत प्रयत्न किया किन्तु विनाश काले विपरीत बुद्धि, श्री कृष्ण ने धर्म और न्याय का समर्थन किया, पाडवों को अपनाया।

क्रमशः

मु. पो मुरारई, जिला – वीरभूम
(पश्चिम बंगाल)

☞ पृष्ठ 08 का शेष

मर्यादा पुरुषोत्तम ...

है। केवल एक ही एक तक सीमित है अतः प्रकरण और विशेषणों से ही विवेक होता है, कहाँ किस अर्थ में है ?

योगदर्शन में महर्षि पतंजलि ने ईश्वर के लिए पुरुष विशेष का प्रयोग किया है। **'क्लेश कर्म–विपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेषः ईश्वरः'**–1,2,4, सामान्य पुरुष तो क्लेश=कष्ट, दुःख, रोग–शोक, ईर्ष्या–द्वेष से कर्म=शुभ–अशुभ, मिले–जुले कार्यो से, इन कर्मों के विपाक=फल से तथा इन सबके चित्त पर पड़ने वाले प्रभाव, संस्कार से प्रभावित जुड़े होते हैं, पर ईश्वर किसी प्रकार के क्लेश, कर्म, विपाक और आशय से लिप्त, संयुक्त नहीं होता। ईश्वर सर्वदा–सर्वथा निर्लिप्त, निर्विकार है।

व्यवहार की स्पष्टता के लिए यह आवश्यक हो जाता है या अच्छा रहता है कि हम शब्दों का प्रयोग इस प्रकार से करें, जिससे अस्पष्टता, संशय न हो इसीलिए **आर्यसमाज राम शब्द का प्रयोग जहाँ दशरथात्मज के लिए करता है और श्रीराम को महापुरुष के रूप में मानता है वहाँ मुख्य रूप से ईश्वर के लिए ओम् शब्द का प्रयोग करता है। वेद आदि शास्त्रों में ऐसा ही विधान है।**

182 शालीमार नगर,
होशियारपुर 146001

☞ पृष्ठ 03 का शेष

आर्य समाज की ...

आदि सब राजा राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध में सब आज्ञानुसार आये थे।" इसे पढ़कर आर्य समाज का मस्तक गर्व से उन्नत हो जाता है। वह उसी की पुनरावृत्ति चाहता है। यदि पूरे विश्व में वैदिक विचारधारा का प्रचार–प्रसार हो जाए तो इस भूमण्डल से सारी समस्याएँ समाप्त हो जाएँ, सारा संसार एक ईश्वर का उपासक हो जाए। मत–मतान्तर, ढोंग, पाखंड, सम्प्रदाय, मजहब मिट जाएँ। यह अक्षरशः सत्य है कि जब तक संसार वेदपथ का अनुगामी नहीं होगा, तब तक धरती से अशान्ति भी नहीं जाएगी। मानव, मानव से लड़ता रहेगा, अपनी लघुता की सीमा रेखा खींचता रहेगा, महाशक्तियों का तांडव मचता रहेगा, अहंकार टकराता रहेगा, मनुष्य के साथ पर्यावरण का विनाश भी होता रहेगा, प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ेगा, उसका प्रकोप बढ़ेगा और मानव आपदाओं का शिकार होगा।

आर्य समाज का छठा नियम कहता है–**"संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।"** यह वैश्विक विचारधारा का सर्वोत्कृष्ट प्रमाण है जिसका नियम ही वैश्विक हो उसका विचार वैश्विक होने में क्या सन्देह। उक्त तीनों प्रकार की उन्नतियों में संसार की सब उन्नतियाँ आ जाती हैं। आर्य समाज मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति चाहता है। सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझता है। सुख बाँटता है और दुःख में सहभागी होता है, उसे दूर करना अपना धर्म मानता है। महर्षि स्वमंतव्यामंतव्य प्रकाश के अन्त में लिखते हैं–**"यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे।"** यह भूगोल शब्द विश्व का बोधक है। वेद पूरे विश्व के लिए है, इसी का प्रचार–प्रसार आर्य समाज करता है। हे संसार के मानवो! आओ वेदामृत का पान करो।

आर्य समाज रावतभाटा
वाया कोटा (राज.–323307)

पत्र/कविता

ओम् का ही जप क्यों ?

अध्यात्म के क्षेत्र में जप का बहुत महत्त्व है। सभी आध्यात्मिक सम्प्रदायों में जप का विधान मिलता है। व्यक्तिगत रूप में भी गुरु अपने शिष्य को कोई भी गुरुमन्त्र देकर उसका जप करने को कहता है। कितने ही व्यक्ति तो हाथ में थैली लटकाकर थैली में माला के आधार पर जप करते रहते हैं। यह भी प्रत्यक्ष ही है कि नाना वाक्यों का प्रयोग जप के रूप में अनेक व्यक्ति करते हैं। यथा–हरिओम् तत्सत्, राम–राम, रामा रामो, ओं नमो भगवते वासुदेवाय इत्यादि वाक्यों का प्रयोग जप में किया जाता है। प्रश्न है कि जप मन को एकाग्र करने के लिए ही है तो किसी का भी जप करके मन को – एकाग्र किया जा सकता है। ओम् के जप में ही क्या विशेषता है। उस पर इतना बल क्यों दिया गया है ?

इसका उत्तर निम्न प्रकार से है–

(1) ओम् का जप वेदानुमोदित है। वेदों का प्रतिपाद्य ब्रह्म है। वही ओम् है या ओम् उसका वाचक है। ब्रह्म वाच्य है। वेदानुसार जप करने से ही हमें अपने लक्ष्य की प्राप्ति होगी, अन्य जपों से नहीं। वेद सर्व प्राचीन तथा सभी के द्वारा समादृत ग्रन्थ हैं। अन्य सभी ग्रन्थ उसके बाद के हैं अतः वैदिक मार्ग के अनुसार ही जप करना श्रेष्ठ है।

(2) वेदों के पश्चात् उपनिषदें तथा योग विषयक जितने भी ग्रन्थ हैं, उनमें। वहाँ इसे प्रणव तथा उद्‌गीथ नाम में भी ओम् के जप का ही विधान किया गया है। जप का प्रकार तथा फल भी वहाँ बतला दिये गये हैं। इस सुनिश्चित तथा सुविचारित मार्ग को छोड़कर अन्य किसी का जप करना सार्थक नहीं होगा। इतना विस्तृत विश्लेषण कहीं भी नहीं है जितना कि उपनिषद् आदि ग्रन्थों में प्रणव या उद्‌गीथ का है। उन ऋषियों से इस पर अनुसन्धान किया है। उन्होंने इसे परमेश्वर का वाचक माना है। अन्य नाम ऐसे नहीं हैं।

(3) ओम् का उच्चारण अन्य सभी नामों की अपेक्षा सरल एवं स्वाभाविक है। बोलने में अशक्त व्यक्ति भी इसका उच्चारण कर सकते हैं।

(4) ओम् मुख्य नाम में परमेश्वर का वाचक है तथा उसी प्रसङ्ग में अपने अन्दर विविध अर्थों को समाहित किये हुए है, उनका वर्णन गत पृष्ठों में किया जा चुका है। लोक में प्रचलित अन्य जप मन्त्रों में कोई भी इस प्रकार परमेश्वर वाचक नहीं है। परमेश्वर का ध्यान करना है तो उसके वाचक शुद्ध शब्द का ही ग्रहण करना चाहिए अन्य का नहीं।

(5) साधना में साधक को स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाना होता है। प्रारम्भ में जप के सभी वाक्य या जिन्हें मन्त्र भी कहा जाता है, उनका उच्चारण करके उन पर ही ध्यान केन्द्रित किया जाता है। साधक को यहीं नहीं ठहरना है। उसे इससे भी आगे सूक्ष्म संसार में प्रवेश करना है। इसके लिए जिसका जप में प्रयोग किया जा रहा है, वह मन्त्र या शब्द भी सूक्ष्मतम होना चाहिए। ओम् सबसे सूक्ष्म है। इसकी अपेक्षा अन्य प्रतीक बड़े हैं। यह ओम् भी सूक्ष्म होते–होते 'ओ३म्' के रूप में रह जाता है। बोलने में तथा ध्यान लगाने में इससे सूक्ष्मतम अन्य कोई शब्द नहीं हो सकता। 'ओ३म्' का उच्चारण किए बिना भी अन्दर से स्वतः ही यह ध्वनि आती हुई प्रतीत होती है। इन सभी कारणों से ओम् का जप ही श्रेष्ठ है, अन्य कोई नहीं।

डॉ. रघुवीर वेदालंकार, वेदाचार्य
बी–266 सरस्वती विहार,
दिल्ली–110034
मो. 9868144317

****

गाय होकर रह गए

हम खड़े मुँह ताकते असहाय होकर रह गए है।
सहन कर अन्याय को अन्याय होकर रह गए हैं।

हाथ से मुँह तक उदर तक ग्रास आधा भी न पहुँचे,
जिन्दगी में व्यय अधिक कम आय होकर रह गए हैं।

पा गए बनवीर अगणित राज्य–सिंहासन समय का,
पालते हम पीर पन्नाधाय होकर रह गए हैं।

शब्द भी हैं अर्थ भी है और सभी अव्यर्थ ही हैं,
कौन बाँचे बिन पढ़े अध्याय होकर रह गए हैं।

कौन जीता कौन मरता है यहाँ परवाह किसको,
खून के कतरे तो जैसे चाय होकर रह गए हैं।

वक्त का है दोष कितना ये हमें कोई बताये,
कुछ कसाई और हम सब गाय होकर रह गए हैं।

एक पत्ती में कहीं अटकी हुई है साँस फिर भी,
धड़कनों के फूल –फल मृतप्राय होकर रह गए हैं।

अब तिलक उनको लगे है पास जिनके है न माथा,
हम उपेक्षित शीश के समुदाय होकर रह गए हैं।

कोकिलों के मूक हैं स्वर काग मुखरित हो उठे हैं,
सब 'मनीषी' पीर के पर्याय होकर रह गए हैं।

प्रो. डॉ सारस्वत मोहन 'मनीषी'
डी–801, बैस्टेक पार्क व्यू संस्कृति एपार्टमेंट,
सैक्टर –92, नया गुरुग्राम हरियाणा–122505
मो. 9810835335

चीकू

चीकू (Chikoo) एक मीठा, पौष्टिक फल है जिसे अंग्रेज़ी में Sapodilla या Sapota कहते हैं, जो अपनी मीठी, दानेदार बनावट और हल्के भूरे रंग के छिलके के लिए जाना जाता है, और यह विटामिन, फाइबर और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है, जो पाचन, रोग प्रतिरोधक क्षमता और समग्र स्वास्थ्य में सुधार करता है और इसे सीधे या मिल्कशेक के रूप में खाया जाता है।

स्वास्थ्य लाभ

पोषक तत्वों से भरपूर (Rich in Nutrients): विटामिन (A, B), फाइबर, एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर।

पाचन (Digestion): पाचन में सुधार करता है, कब्ज से राहत देता है।

ऊर्जा (Energy): तुरंत ऊर्जा प्रदान करता है, डिहाइड्रेशन दूर करता है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता (Immunity): प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है।

तनाव कम (Stress Relief): मस्तिष्क को शांत करता है और तनाव कम करता है।

गर्भावस्था (Pregnancy): गर्भवती महिलाओं के लिए फायदेमंद, मतली और उल्टी से राहत देता है।

कैसे खाएँ (How to Eat):

सीधा फल (Directly): छीलकर खाया जा सकता है।

मिल्कशेक (Milkshake): मिल्कशेक और स्मूदी में उपयोग होता है।

मिठाई (Desserts): मिठाइयों में भी इस्तेमाल किया जाता है।

चीकू एक स्वादिष्ट और पौष्टिक फल है जो कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है और इसे आसानी से अपनी डाइट में शामिल किया जा सकता है।

****

डी.ए.वी. ठाणे में महात्मा हंसराज जयंती पर भव्य कार्यक्रम

डी.ए.वी. विद्यालय ठाणे में महान शिक्षाविद् और समाज सुधारक महात्मा हंसराज जी की जयंती (19 अप्रैल 2026) बड़े ही उत्साह और श्रद्धा के साथ मनाई गई। विद्यालय में विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया गया, जिसका उद्देश्य छात्रों को महात्मा जी के जीवन मूल्यों से परिचित कराना था।

कार्यक्रम का आरंभ प्रार्थना और भजनों के साथ हुआ। जयंती को यादगार बनाने के लिए कक्षा नौवीं के विद्यार्थियों ने हवन का आयोजन किया। छात्रों द्वारा वेदमंत्रों का शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण किए जाने से पूरा वातावरण पवित्र और सात्विक हो गया।

विद्यार्थियों के लिए आयोजित अंतर–सदन (Inter-House) भजन प्रतियोगिता में गंगा, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी हाउस के बच्चों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया और विजयी हाउस को पुरस्कृत किया गया। छात्रों ने महात्मा जी के आदर्शों पर आधारित सुंदर स्लोगन भी लिखे।

प्रधानाचार्या श्रीमती सिम्मी जुनेजा ने न केवल बच्चों को प्रेरित किया, बल्कि महात्मा हंसराज जी के जीवन से संबंधित कुछ रोचक प्रश्न भी पूछे, जिनका छात्रों ने उत्साहपूर्वक उत्तर दिया। उन्होंने बच्चों को महात्मा जी **'सादा जीवन, उच्च विचार'** के सिद्धांत से सीख लेने की शिक्षा दी।

शिक्षकों ने भी अपने भाषण के माध्यम से उनके योगदान पर प्रकाश डाला।

सभी ने संकल्प लिया कि वे महात्मा हंसराज जी के दिखाए मार्ग पर चलकर समाज और राष्ट्र की सेवा करेंगे। शांति पाठ के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. कॉलेजिएट स्कूल जालन्धर में सत्र का शुभारंभ

डी.ए.वी. कॉलेजिएट सीनियर सेकेंडरी स्कूल, जालंधर में नए शैक्षणिक सत्र की शुरुआत पर एक हवन–यज्ञ का आयोजन किया गया। प्राचार्य डॉ. अनूप

कुमार ने मुख्य यजमान के रूप में वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ आहुतियाँ अर्पित कीं।

डॉ. अनूप कुमार ने विद्यालय परिवार को नए सत्र की शुभकामनाएँ दीं। उन्होंने कहा कि डी.ए.वी. संस्थान की परंपरा प्राचीन वैदिक संस्कृति और आधुनिक शिक्षा का उत्कृष्ट समन्वय प्रस्तुत करती है। उन्होंने बताया कि मंत्रों की पवित्र ध्वनि वातावरण में सकारात्मक ऊर्जा का संचार करती है तथा मानसिक शांति प्रदान करती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी यज्ञ पर्यावरण को शुद्ध करने का माध्यम है। उन्होंने विद्यार्थियों को अनुशासन, परिश्रम एवं लगन के साथ अध्ययन कर शैक्षणिक उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया।

पूरे परिसर में गूँजते वैदिक मंत्रों ने आध्यात्मिक और प्रेरणादायक वातावरण निर्मित कर दिया।

इस अवसर पर वरिष्ठ उप–प्राचार्य प्रो. कुँवर राजीव, उप प्राचार्या प्रो. सोनिका दानिया, रजिस्ट्रार प्रो. अशोक कपूर, स्टाफ सेक्रेटरी डॉ. पुनीत पुरी, जॉइंट स्टाफ सेक्रेटरी डॉ. ऋषि कुमार तथा डॉ. नवीन सूद (एलएमसी सदस्य) विशेष रूप से उपस्थित रहे।

इसके अतिरिक्त विभिन्न विभागों के विभागाध्यक्ष, शिक्षण एवं गैर–शिक्षण स्टाफ तथा बड़ी संख्या में विद्यार्थियों ने भी यज्ञ में सहभागिता कर आहुतियाँ अर्पित कीं और नए शैक्षणिक सत्र के लिए शुभाशीर्वाद प्राप्त किया।

डी.ए.वी. पुष्पांजलि में 'वैदिक चेतना शिविर'

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, पुष्पांजलि एन्क्लेव के प्रांगण में कक्षा आठवी के सभी छात्र–छात्राओं के लिए एक दिवसीय वैदिक चेतना शिविर का आयोजन किया गया। जिसमें योग, ध्यान, हवन, प्रातःराश, बौद्धिक उद्बोधन, भोजन, वैदिक चर्चा और छात्र उद्बोधन का आयोजन किया गया।

श्रीमती रश्मिराज बिस्वाल ने शिविर को सम्बोधित करते हुए कहा कि डी.ए.वी. संस्थाएं अपने स्थापना काल से ही इस तरह के कार्यक्रम आयोजित करती रहती हैं, जो छात्र छात्राओं में नैतिक मूल्यों के संवर्धनार्थ, वैदिक संस्कृति के ज्ञानार्थ, श्रेष्ठ आचरण का निर्माण कर सके। उसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हम विद्यालय में प्रतिवर्ष नैतिक, आत्मिक और सामाजिक विकास की सतत उन्नति के प्रयास करते हैं।

शिविर का प्रारम्भ बच्चों ने योग, ध्यान और हवन में भाग लेकर किया। प्रातःराश के उपरान्त में वैदिक विद्वान् डॉ देवशर्मा जी ने **"हम व्यवस्थित कैसे हों"** इस विषय पर अपने सारगर्भित विचार व्यक्त किए जिसको बच्चों ने बहुत रुचि और जिज्ञासा से श्रवण किया। वैदिक ज्ञान पर एक प्रश्नोत्तरी आयोजित की गई, जिसमें सभी छात्रों ने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया।

प्रधानाचार्या ने वक्ताओं का स्वागत और आभार व्यक्त किया और कहा– विद्वानों के उद्बोधन बच्चों को मानसिक, शारीरिक व सामाजिक दृढ़ता प्रदान करने में मदद करेंगे।

आभार धन्यवाद व्यक्त करते हुए कार्यक्रम समाप्त हुआ।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2026

हंसराज महिला महाविद्यालय, जालन्धर में शत कुण्डीय महायज्ञ

हंसराज महिला महाविद्यालय, जालंधर में शताब्दी वर्ष में प्रवेश के उपलक्ष्य में शत कुण्डीय महायज्ञ का आयोजन किया गया। प्राचार्या डॉ. (श्रीमती) एकता खोसला के मार्गदर्शन में आयोजित कार्यक्रम में महाविद्यालय परिसर को आध्यात्मिक ऊर्जा से परिपूर्ण कर दिया। इस शुभ अवसर पर माननीय जस्टिस (सेवानिवृत्त) श्री एन.के. सूद, चेयरमैन लोकल एडवाइज़री कमेटी, श्रीमती अरुणिमा सूद, डॉ. जे.पी. शूर, प्रधान, आर्य प्रदेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब, लोकल एडवाइज़री कमेटी के सदस्यगण तथा अन्य गणमान्य अतिथियों की गरिमामयी उपस्थिति रही।

प्राचार्या डॉ. एकता खोसला ने समस्त एचएमवी परिवार को इस ऐतिहासिक एवं गौरवपूर्ण अवसर पर हार्दिक बधाई दी। उन्होंने कहा कि महाविद्यालय का शताब्दी वर्ष में प्रवेश करना अत्यंत सौभाग्य की बात है और इस ऐतिहासिक क्षण का साक्षी बनना सभी के लिए गर्व का विषय है। डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति, नई दिल्ली के प्रधान पद्मश्री अलंकृत माननीय डॉ. पूनम सूरी जी एवम् स्थानीय प्रबन्धकर्त्री समिति के प्रत्येक सदस्य का सदा उचित दिशा–निर्देशन हेतु धन्यवाद ज्ञापित किया।

जस्टिस (सेवानिवृत्त) श्री एन.के. सूद ने समस्त एचएमवी परिवार को हार्दिक शुभकामनाएं देते हुए कहा कि वे इस भव्य एवं सार्थक आयोजन का हिस्सा बनकर स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहे हैं।

डॉ. जे.पी. शूर ने प्राचार्या, स्टाफ एवं छात्राओं को उत्कृष्टता और संस्कारों की समृद्ध परंपरा को आगे बढ़ाने के लिए बधाई दी। उन्होंने सभी को सच्चे अर्थों में आर्य बनने के लिए प्रेरित करते हुए कहा कि 'आर्य' वह है जो सदैव श्रेष्ठ बनने का प्रयास करता है।

प्राचार्य इंदरजीत तलवार ने भी राष्ट्र निर्माण एवं सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को डीएवी संस्थाओं की आधारशिला बताते हुए एचएमवी द्वारा इस मिशन को गरिमा एवं उत्कृष्टता के साथ आगे बढ़ाने की सराहना की।

इस अवसर पर एलईडी पैनल की स्थापना एवं महाविद्यालय के नए प्रवेश द्वार का उद्घाटन भी किया गया। एच.एम.वी. के 100 वर्षों को दर्शाता एक वीडियो भी जारी किया गया। संगीत विभाग ने अपनी प्रस्तुतियों से विशेष योगदान दिया।

जिया लाल मित्तल डी.ए.वी. गुरदासपुर में विशेष हवन

जिया लाल मित्तल डी.ए.वी पब्लिक स्कूल गुरदासपुर में स्कूल का 23वाँ स्थापना दिवस मनाया गया। इस अवसर पर स्कूल में विशेष यज्ञ किया गया। मित्तल परिवार के सभी सदस्यों ने मिलकर विद्यालय की उन्नति व विश्व शांति के लिए यज्ञ में विशेष आहुतियाँ अर्पित कीं।

श्रीमती आशा मित्तल ने सभी को इस दिन की बधाई देते हुए बताया कि इस स्कूल का आरंभ 22 साल पहले श्रद्धेय स्वर्गीय श्री बाल कृष्ण मित्तल जी के द्वारा छत्तीस विद्यार्थियों से किया गया था। मैं ईश्वर से कामना करती हूँ कि यह संस्था इसी तरह उन्नति के पथ पर अग्रसर रहे।

प्रिंसिपल श्री राजीव भारती ने सभी अतिथियों, नए अभिभावकों व नए परिवारों का हार्दिक स्वागत किया। उन्होंने स्वर्गीय श्री बाल कृष्ण मित्तल जी द्वारा इस संस्था की स्थापना और विकास में दिए महत्वपूर्ण योगदान पर प्रकाश डाला।

उन्होंने कहा कि अभिभावक विद्यालय की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान देते रहें।

इस सुअवसर पर स्कूल के बच्चों और संगीत विभाग की ओर से भजन प्रस्तुति भी की गई जिसका सभी ने लाभ उठाया।

कार्यक्रम के अंत में सभी के लिए ऋषि लंगर का आयोजन भी किया गया।

बी.बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन ने यूथ रेड क्रॉस प्रतियोगिताओं में जीती ट्रॉफी

बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन अमृतसर ने राज्य–स्तरीय यूथ रेड क्रॉस प्रतियोगिताओं में ओवरऑल ट्रॉफी जीतकर शानदार उपलब्धि हासिल की, जिसमें टीम ने मानवीय, शैक्षणिक और विभिन्न संस्थानों ने भाग लिया, जिससे बी बी के डी ए वी कॉलेज फॉर विमेन की उपलब्धियां वास्तव में उल्लेखनीय बन गई।

प्रिंसिपल डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने इस शानदार उपलब्धि पर प्रसन्नता व्यक्त

रचनात्मक प्रतियोगिताओं में असाधारण उत्कृष्टता का प्रदर्शन किया। कॉलेज टीम के उत्कृष्ट प्रदर्शन ने संस्थान को गौरवान्वित किया।

कॉलेज टीम ने फर्स्ट एड, क्विज और पोस्टर मेकिंग में प्रथम स्थान हासिल किया, जिसके परिणामस्वरूप कॉलेज को ओवरऑल ट्रॉफी से सम्मानित किया गया। इस कार्यक्रम में राज्य भर के करते हुए छात्राओं को बधाई दी और कहा कि ओवरऑल ट्रॉफी जीतना कॉलेज में दी जाने वाली समग्र और मूल्य–आधारित शिक्षा का प्रमाण है।

इस अवसर पर डॉ अनीता नरेंद्र, डीन, कम्युनिटी डेवलपमेंट इनिशिएटिव्ज, डॉ. बेनू कपूर, कोऑर्डिनेटर रेडक्रॉस और सुश्री अक्षिका भी उपस्थित रहीं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**